नॉस्डॉक अनुसंधान सूचना श्रृंखला: 1

नवागत पुस्तकें

(सारांश के साथ नई प्रविष्टियों की सूची)

अगस्त (हिंदी विशेष), 2025

भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद
राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान प्रलेखन केंद्र
35, फिरोजशाह रोड,
नई दिल्ली – 110001

©नॉस्डॉक - आईसीएसएसआर

****

नवागत पुस्तकें: सारांश के साथ नए संकलन की सूची
नॉस्डॉक टीम द्वारा संकलित एवं सम्पादित,
राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान प्रलेखन केंद्र, ५५पृ.
(नॉस्डॉक अनुसंधान सूचना श्रंखला: १)
अगस्त, २०२५

****

प्राक्कथन

“नवीन आगमन: सारांश सहित नई प्राप्तियों की सूची” के वर्तमान अंक में अगस्त २०२५ माह में संसाधित की गई और भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद (आईसीएसएसआर) के राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान प्रलेखन केंद्र (नॉस्डॉक) में उपयोग हेतु उपलब्ध नई पुस्तकों की सूची शामिल है। मुख्य पाठ में प्रविष्टियाँ शीर्षक के अनुसार वर्णानुक्रम में दी गई हैं, जिनके बाद ग्रंथसूची संबंधी विवरण और दस्तावेज़ का सारांश प्रस्तुत किया गया है। सरल संदर्भ हेतु, अंत में लेखक एवं कीवर्ड सूचकांक भी दिया गया है, जिसमें लेखक या कीवर्ड के सामने दर्शाया गया संख्या मुख्य सूची में “नवीन आगमन” की प्रविष्टि के क्रमांक को दर्शाती है। इच्छुक पाठक सूचीबद्ध शीर्षकों का अवलोकन पुस्तकालय में आकर कर सकते हैं।

सुझावों का सदैव स्वागत है।

डॉ. एस.एन.चारि
निदेशक (प्रलेखन)

****

क्रंसं.	शीर्षक और अन्य विवरण	परिग्रहण संख्या/आवरण पृष्ठ
1	श्रीमंतशंकरदेवविरचितं - कीर्तनम/ हजरिका, महेश्वर - विवेकानन्द केन्द्र संस्कृति संस्थान, गुवाहाटी, असम, **2015**; **396**पृ. भारत के भक्ति आंदोलन ने अनेक महान संतों के प्रयासों से एक सामाजिक-सांस्कृतिक पुनर्जागरण देखा। महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव **(1449–1568)** इस आंदोलन के ईशान्य भारत में मूल प्रवर्तक थे। वे एक संत, उपदेशक, कवि, संगीतकार, नाटककार, कलाकार, दार्शनिक और समाज-सुधारक थे, जिनके कार्यों का प्रभाव असम के सामाजिक-आर्थिक, धार्मिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों पर अत्यंत गहरा पड़ा–वास्तव में, इसने सम्पूर्ण भारत के इतिहास को भी प्रभावित किया। किर्त्तन घोषा या किर्त्तन पुथी, जिसे सामान्यतः केवल किर्त्तन कहा जाता है, उनकी अद्‌वितीय साहित्यिक प्रतिभा की चरम अभिव्यक्ति है। इस महान कृति में गुरुजना (जैसा आदरपूर्वक श्रीमंत शंकरदेव को संबोधित किया जाता है) ने वेदांत के स्वर से ओतप्रोत भागवत के उपदेशों को सरल और हृदयस्पर्शी रूप में प्रस्तुत किया है।उन्होंने भक्ति और नामधर्म के महिमामय गुणों को विशेष रूप से रेखांकित किया है। नौ प्रकार की भक्ति– श्रवण, कीर्तन, अर्चन, बंदन, स्मरण, पदसेवन, दास्य, साखित्व तथा देहर्पण– को उन्होंने इसलिए महत्त्वपूर्ण बताया क्योंकि कलियुग की जटिल जीवनशैली में ये साधन सबसे अधिक उपयुक्त और प्रभावी हैं।	**54464**
2	एक अंतहीन युद्‌ध/ भटनागर, राजेंद्र मोहन - अनन्या प्रकाशन, दिल्ली, **2018**; **208**पृ. 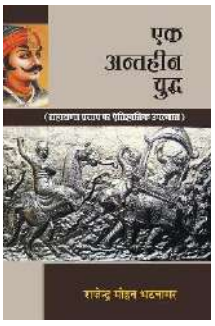 भारत के इतिहास में मध्यकालीन युग अन्यन्त महत्त्वपूर्ण है । विशेषतया यह युग मुगल और मेवाड़ के संघर्ष और प्रेम का रहा है । जहाँ निरंकुश शासक अकबर ने 'आरोपित शासन' को 'सम्मति शासन' में बदल कर राजतन्त्र को एक सर्वथा नवीन गरिमापूर्ण और उदारनीति की दिशा प्रदान की, वहाँ मेवाड़पति महाराणा प्रताप ने राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए समग्र जीवन समर्पित करने का अप्रतिम उद्‌धरण प्रस्तुत किया है । यद्‌यपि इन तथ्यों के संबंध में विद्‌वान इतिहासकारों में मतैक्य नहीं है तथापि इन सबके उपरान्त भी न महान अकबर अपने पद से छोटा हो पाया है और न स्वतन्त्रता का अलख जगाने वाला मेवाड़पति महाराणा प्रताप अपनी गरिमा से तनिक भी पीछे हट सका है । यथार्थत% सोलहवीं शताब्दी भारत के इतिहास में ऐसा संक्रान्ति काल सिद्‌ध	**54579**

हुआ है जिससे राष्ट्रीय और जन-जीवनीय चेतना में गम्भीर और सार्थक उद्‌वेलन हुआ है । आश्चर्य तब होता है, जब मानव होने या सिद्‌ध करने की कथा को समीक्षक महामानव से जोड़ने लगते हैं । वे यह मानने के लिए तैयार नहीं हंै कि सम्राट अकबर और स्वतन्त्रता के उद्‌भट योद्‌धा महाराणा प्रताप की समग्र गाथा मानव बनने की कथा है, महामानव बनने का इतिहास नहीं । दोनों ने 'सम्राटत्व' की आरोपित गरिमा का ध्वंस किया है और दोनों ने जनजीवन से सम्बद्‌ध होने का प्रयास किया है । दोनों ने जनचेतना को अपने ढंग से प्रभावित किया है । वह मानव जो मानव होते हुए भी मानव नहीं है, जब अपने में से किसी को मानवोचित आधार पर जीने के लिए संघर्ष करता पाता है, तब विचलित हो उठता है और उस पावन गंगा को जनजीवन में न बहने देने के लिए प्रयास करता है । 'महामानव' उसी का प्रतिफल है । अन्ततोगत्वा मानव है क्या! इसी का उत्तर देने की चेष्टा मात्र है ।

3 पातञ्जल योग विमर्श: वाचस्पति मिश्र और विज्ञानभिक्षु के परिप्रेक्ष्य में/ शास्त्री, विजयपाल - सत्यम पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, **1991**; **277**पृ. **54580**

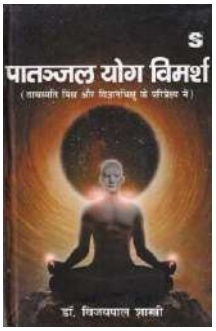

योग दर्शन के क्षेत्र में अनेक विवरण ग्रन्थों और समीक्षा साहित्य के होते हुए भी प्रस्तुत ग्रन्थ पातञ्जल योग विमर्श का विशिष्ट महत्त्व है। पतंजलि प्रणीत योग सूत्र के व्यासभाष्य के ऊपर वाचस्पति मिश्रकृत योगतत्त्व वैशारदी और विज्ञानभिक्षुकृत योगवार्तिक टीका को लक्ष्य बनाकर प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना की गयी है। व्यासदेव कृत भाष्य के बिना पतञ्जलि के हृदय को समझना असंभव ही था। व्यासभाष्य के कतिपय मन्तव्यों को समझना भी पाठकों के लिए सरल नहीं था। उसको समझने में आचार्य वाचस्पति मिश्र और विज्ञानभिक्षु की टीकाओं ने महनीय योगदान किया। इन दोनों टीकाओं की व्याख्याओं में भी कहीं-कहीं मतभेद प्राप्त होता है। उन्हीं मतों की समीक्षा करनें में प्रस्तुत ग्रन्थ कृतकार्य हुआ है। योगदर्शन के शोधार्थियों के लिए यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी सिद्‌ध होगा, ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है।

4 मानव शास्त्र की उत्पत्ति और इतिहास/ अग्निहोत्री, विभा; मिश्रा, रश्मि; अग्रवाल, पूजा - सत्यम पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, **2021**; **312**पृ. **54581**

मानवशास्त्र की उत्पत्ति एवं इतिहास' का यह संस्करण स्नातक एवं स्नातकोत्तर परीक्षा में सम्मिलित नवीन पाठ्यक्रम को दृष्टि में रखते हुए लिखा गया है। पुस्तक का प्रमुख उद्देश्य मानवशास्त्र की उत्पत्ति एवं इतिहास से छात्र-छात्राओं को परिचित कराना है। प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से मानवशास्त्र एवं उसकी विभिन्न शाखाओं की उत्पत्ति, संवर्धन, इतिहास तथा उपयोगिता के विषय में सरल एवं बोधगम्य भाषा में विद्यार्थियों को परिचित कराने का प्रयास किया गया हैं।

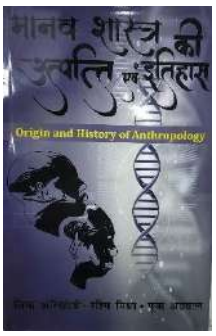

5 मेरे जेल के अनुभव/ गांधी, महात्मा - अनन्या प्रकाशन, दिल्ली, **2018**; **88**पृ. **54582**

महात्मा गांधी की पुस्तक "मेरे जेल के अनुभव" एक विशिष्ट पुस्तक नहीं है, बल्कि उनके विभिन्न जेल प्रवासों और कैदी जीवन के अनुभवों का एक संकलन है, जो उनकी आत्मकथा 'सत्य के साथ मेरे प्रयोगों की कहानी' में वर्णित हैं। इन अनुभवों में उनकी सहनशक्ति, अहिंसा के प्रति प्रतिबद्धता, परिवार की चिंता और जेल के दौरान सुधार के प्रयास शामिल हैं। उन्होंने जेल को अपनी आत्म-शुद्धि और प्रयोगों का स्थान माना और वहां के नियमों का पालन करते हुए भी अन्यायपूर्ण व्यवहार के खिलाफ आवाज उठाई।

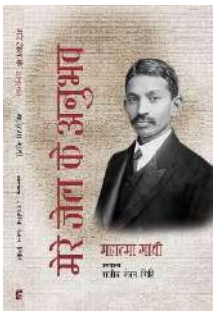

6 योग एवं आहार/ शंकर, गणेश - सत्यम पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, **2011**; **167**पृ. **54583**

“योग एवं आहार” पुस्तक में यह स्पष्ट किया गया है कि योग केवल शारीरिक अभ्यास नहीं बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक विकास का मार्ग है, और आहार इसका अभिन्न अंग है। संतुलित, शुद्ध और सात्विक भोजन से न केवल शरीर स्वस्थ रहता है, बल्कि मन की चेतना भी ऊँची होती है, जिससे योग की साधना प्रभावी बनती है। हल्का और ताजगीपूर्ण भोजन जैसे दाल, अनाज, फल, सब्जियाँ और दूध योगाभ्यास में शक्ति और स्थिरता लाते हैं, जबकि अत्यधिक मसालेदार, तैलीय या भारी भोजन शरीर और मन में तनाव, आलस्य और रोग उत्पन्न करता है। मिताहार यानी भोजन में संयम का पालन योग के अनुशासन के लिए आवश्यक है। इस प्रकार, योग और आहार का मेल व्यक्ति को शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्पष्टता और भावनात्मक संतुलन प्रदान करता है, जिससे ध्यान, प्राणायाम और साधना में सफलता मिलती है और जीवनशैली में अनुशासन और दीर्घायु सुनिश्चित होती है।

7 धूप छांह/ दिनकर, रामधारी सिंह - लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, **2010**; **67**पृ. **54584**

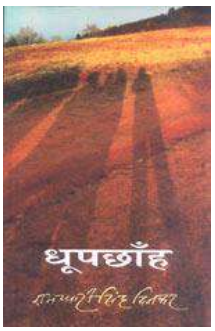

‘धूपछाँह’ राष्ट्रकवि रामधारी सिंह ‘दिनकर’ की सोलह ओजस्वी कविताओं का संकलन है जिसमें प्रांजल प्रवाहमयी भाषा, उच्चकोटि का छंद विधान और भाव संप्रेषण का समावेश किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में शक्ति या सौंदर्य, बल या विवेक, बच्चे का तकिया, पानी की चाल, कवि का मित्रा, दो विधा जमीन, तन्तुवायु, कैंची और तलवार, पुरातन भृत्य, भारतेन्द्र-स्मृति, वर-भिक्षा, रौशन वे की बहादुरी, नींद, तीन दर्द, पुस्तकालय, कलम और तलवार इत्यादि काव्य संकलित हैं जो उन लोगों को समर्पित है जो अपेक्षाकृत अल्पवयस्क है और सीधी-साधी रचनाओं से सहज ही प्रसन्न हो जाते हैं। आशा है कविवर दिनकर की यह कृति युवा पीढ़ी को एक नया संदेश देगी।

8 रसवंती/ सिंह, दिनकर रामधारी - लोकभारती प्रकाशन, अलाहाबाद, **2010**; **103**पृ. **54585**

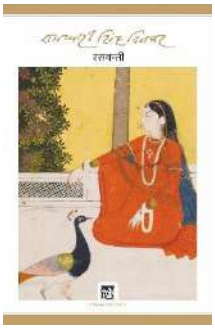

प्रस्तुत पुस्तक ‘रसवन्ती’ राष्ट्रकवि रामधारी सिंह ‘दिनकर’ जी के आरम्भिक आत्ममंथन युग की रचना है। इसमें कवि के व्यक्तिपरक सौन्दर्यबेषी मन और सामाजिक चेतना से उत्तम बुद्धि के परस्पर संघर्ष का तटस्थ द्रष्टा नहीं दोनों के बीच से कोई राह निकालने की चेष्टा में संलग्न साधक के रूप में मिलता है। इस काव्य संग्रह में गीत-शिशु, रसवन्ती, गीत-अगीत, बालिका से वधू, प्रीति, दाह की कोयल, नारी, अगुरु-धूम, रस की मुरली, मानवती, नारी, पुरुष-प्रिया, गीत, अन्तर्वासिनी, पावस-गीत कत्तिन का गीत, मरण, समय, आश्वासन, कवि, कालिदास, विजन में, प्रभाती, संध्या, अगेय की ओर, सावन में, भ्रमरी, रहस्य, संबल, प्रतीक्षा, शेष गान कविताएँ संग्रहित हैं। इसकी प्रांजल प्रवाहमयी भाषा, उच्चकोटि का छंद विधान और सहज भाव सम्प्रेषण काव्य प्रेमियों को अवश्य पसंद आएगी।

9 रेणुका/ सिंह, दिनकर रामधारी - लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, **2009**; **110**पृ. **54586**

दिनकर बन्धनों और रूढ़ियों से मुक्त अपनी राह के कवि हैं। इसलिए उन्हें स्वच्छन्दतावाद के कवि के रूप में भी रेखांकित किया गया। ‘रेणुका’ में इसकी स्पष्ट झलक मिलती है। संग्रह की पहली कविता ‘मंगल आह्वान’ में दिनकर का जो उन्मेष है, उससे पता चलता कि वे राष्ट्रीय चेतना से किस तरह ओतप्रोत थे–‘भावों के आवेग प्रबल/मचा रहे उर में हलचल।’ परतंत्र भारत में असमानता और अत्याचार से विचलित होने के बजाय वे आक्रोश से भरे दिखते हैं जिसे व्यक्त करने के लिए वे अतीत-गौरव के ज़रिए भी सांस्कृतिक चेतना अर्जित करते हैं–‘प्रियदर्शन इतिहास कंठ में/आज ध्वनित हो काव्य बने/वर्तमान की चित्रपटी पर/भूतकाल सम्भाव्य बने।’ इसी कड़ी में वे ‘पाटलिपुत्र की गंगा से’, ‘बोधिसत्व’, ‘मिथिला’, ‘तांडव’ आदि कविताओं में चन्द्रगुप्त, अशोक, बुद्ध और विद्यापति तथा मिथकीय चरित्रों–शिव, गंगा, राम, कृष्ण आकर्षक भाषा-शैली में

याद करते हैं। वे 'हिमालय' में गुणगान तो करते हैं, लेकिन समाधिस्थ हिमालय जन में उदात्त चेतना का प्रतीक बन सके, इसलिए यह कहने से भी नहीं चूकते कि 'तू मौन त्याग, कर सिंहनाद/रे तपी! आज तप का न काल/नव-युग-शंखध्वनि जगा रही/तू जाग, जाग, मेरे विशाल!' संग्रह में 'परदेशी' एक अलग मिज़ाज की रचना है। इसमें पौरुष स्वर के बदले लोकनिन्दा का भय गहनता में प्रकट है। इसी तरह 'जागरण', 'निर्झरिणी', 'कोयल', 'मिथिला में शरत्', 'अमा-सन्ध्या' जैसी कविताएँ भी हैं जिनमें क्रान्तिधर्मिता नहीं, बल्कि प्रकृति, जीवन और प्रेम का सौन्दर्य-सृजन है। 'गीतवासिनी' की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–'चाँद पर लहराएँगी दो नागिनें अनमोल/चूमने को गाल दूँगा दो लटों को खोल।' 'रेणुका' की कविताएँ भिन्न-भिन्न स्वरों की होते हुए भी अपनी जातीय सोच और संवेदना में बृहद् कैनवस लिये हैं। इस संग्रह के बग़ैर दिनकर का ही नहीं, उनके युग का भी सही आकलन सम्भव नहीं।

10 अकेली/ भंडारी, मन्नू - रेमाधव पब्लिकेशन, गाजियाबाद, **2007**; **240**पृ. **54587**

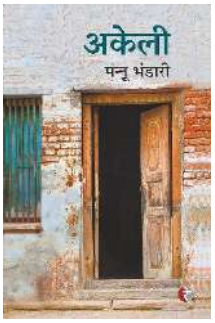

अकेली मन्नू भंडारी द्वारा लिखी गयी एक मनोवैज्ञानिक कहानी है। इस कहानी में एक ऐसी औरत का वर्णन है जो अपने पति के होते हुए भी अकेली है। उस स्त्री का नाम है सोमा। लोग प्यार से उसे सोमा बुआ कहते है।इस कहानी में सोमा बुआ के मानसिक संसार का वर्णन किया गया है। उसका सोचना , अलग अलग विषयों पर उसके विचार , परिस्थियों को वह किस प्रकार संभालती है आदि को इस कहानी में दिखाया गया है। पुत्र की मौत और पति के हरिद्वार चले जाने के बाद सोमा अकेली रह जाती है तथा अपने आप को समाज को सौंप देती है जिसका अर्थ है वह सामाजिक कामो में अपना मन लगा लेती है लेकिन वहाँ भी उसके पति उसमें रोक-टोक करते है। इस प्रकार हम देखते हैं कि"अकेली" कहानी सोमा नामक एक अकेली औरत के इर्द-गिर्द धूमती है तथा उसी के माध्यम से अपने उद्देश्य को प्रकट करती हैं।

11 अमिता/ यशपाल - लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, **2010**; **164**पृ. **54588**

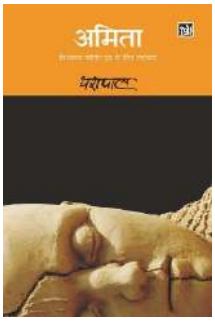

अमिता' उपन्यास साहित्यकार यशपाल का 'दिव्या' की भाँति ऐतिहासिक है। 'अमिता' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में कल्पना को आधार बनाकर लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास के प्राक्कथन में यशपाल स्वयं इसके मूल मन्तव्य की ओर इशारा करते हैं-'विश्वशान्ति के प्रयत्नों में सहयोग देने के लिए मुझे भी तीन वर्ष में दो बार यूरोप जाना पड़ा है। स्वभावतः इस समय **(1954-1956)** में लिखे मेरे इस उपन्यास में, मुद्दों द्वारा लक्ष्यों को प्राप्त करने अथवा

समस्याओं को सुलझाने की नीति की विफलता का विचार कहानी का मेरुदंड बन गया है।'

12 अल्पविराम/ प्रियंवदा, उषा - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2024**; **311**पृ. **54589**

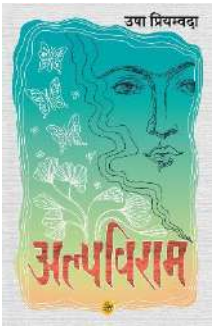

उषा प्रियम्वदा का यह उपन्यास एक लम्बे दिवास्वप्न की तरह है जिसमें तिलिस्मी, चमत्कारी अनुभवों के साथ-साथ अनपेक्षित घटनाएँ भी पात्रों के जीवन से जुड़ी हुई हैं। एक ओर यह मृत्यु के कगार पर खड़े परिपक्व व्यक्ति की तर्क विरुद्ध, असंगत, अपने से उम्र में आधी युवती के प्यार में आकंठ डूब जाने की कहानी है पर साथ-साथ एक अविकसित, अप्रस्फुटित, अव्यावहारिक स्त्री के सजग, सतर्क और स्वयंसिद्ध होने की भी यात्रा है। यात्रा का बिम्ब उषा प्रियम्वदा के हर उपन्यास में मौजूद है। चाहे वह कैंसर से उबरने की यात्रा हो या अपने से विलग हुई सन्तान के लौटने तक की। इस उपन्यास की कथा भी प्रमुख स्त्री पात्र की स्वयं चेतन, स्वयं सजग और स्वयं जीवन-निर्णय लेने तक की यात्रा है, और लेखिका के हर उपन्यास की तरह कहानी अन्तिम पृष्ठ पर समाप्त नहीं होती, बल्कि पाठिका/पाठक के मन में अपने अनुसार समाप्ति तक चलती रहती है। इस उपन्यास में प्रवास, इतिहास और साहित्य तीन धाराओं की तरह जुड़ा हुआ है, और लेखिका ने पठनीयता के साथ-साथ पाठिका/पाठक को गम्भीरता से अपना जीवन विश्लेषण करने की ओर प्रेरित किया है। 'अल्प विराम' एक प्रेम कथा है। बाकी वृत्तान्त एक चौखटा है, एक फ्रेम। परन्तु फ्रेम के बिना तस्वीर अधूरी है। इसी प्रकार प्रेम कहानी प्रवाल के बिना अपूर्ण है।.

13 आज का हिंद स्वराज/ जोशी, संदीप - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **207**पृ. **54590**

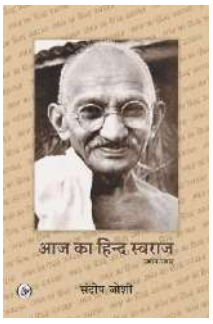

महात्मा गाँधी को सिरे से ख़ारिज करने या उनका अवमूल्यन करने की मुहिम, इन दिनों, सुनियोजित ढंग से चलायी जा रही है। हमारा समय, कम से कम इस समय सत्तारूढ़ शक्तियों के किये-लेखे, गाँधी के अस्वीकार का, गाँधी-विरोध का समय है। यह विरोध या अस्वीकार गाँधी को एक नयी और तीक्ष्ण प्रासंगिकता देता है। उस प्रासंगिकता का ही हिस्सा है प्रश्नवाचकता जबकि प्रश्न पूछना लगभग गुनाह क़रार दिया जा रहा है। गाँधी ने अपने समय में निर्भयता से प्रश्न उठाये और उनके समुचित उत्तर देने की कोशिश की। युवा चिन्तक और कर्मशील संदीप जोशी हमारे समय के कुछ ज़रूरी प्रश्न और उसके बेचैन उत्तर खोजने की 'गुस्ताख़ी' कर रहे हैं। यह गाँधी की दृष्टि का हमारे कठिन समय के लिए पुनराविष्कार है।

14 आमने-सामने/ सिंह, नामवर; सिंह, विजय प्रकाश (संपादक) - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2019**; **280**पृ. **54591**

नामवर सिंह अब हमारे बीच नहीं है, लेकिन उनका बोला-बताया अब भी ऐसा बहुत कुछ है जो सामने आना बाकी है। लम्बे समय तक उन्होंने व्यवस्थित ढंग से कुछ नहीं लिखा था; व्याख्यानों और वक्तव्यों के रूप में ही उन्होंने आलोचना के नए-नए पैमाने तोड़े और बनाए। युवाओं, वरिष्ठों, छात्रों-पत्रकारों और समकालीन रचनाकारों को दिए साक्षात्कारों में भी उन्होंने सदैव एक उत्तरदायी आलेचकीय चेतना को अभिव्यक्ति दी। उनकी आश्चर्यजनक स्मृति, वैचारिक स्पष्टता और आस्वादपरक समीक्षा के चलते व्याख्यानों की तरह उनके साक्षात्कार भी सदैव चर्चित रहे। इस पुस्तक में उनके ऐसे साक्षात्कारों को संकलित किया गया है जो अब तक किसी और पुस्तक में नहीं आए थे। कई वरिष्ठ और कनिष्ठ रचनाकारों और सम्पादकों के साथ हुए ये वार्तालाप उनकी आलोचना-दृष्टि, समकालीन रचनात्मकता पर उनके विचारों और सरोकारों को रेखांकित करते हैं। इनमें से कुछ साक्षात्कार इसलिए और भी दिलचस्प है कि इनमें उन्होंने किसी एक ही रचनाकार या कृति पर केन्द्रित प्रश्नों पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। मसलन स्वयं प्रकाश, त्रिलोचन, काशीनाथ सिंह का 'काशी का अस्सी' आदि पर केन्द्रित बातचीत। साक्षात्कारकर्ताओं में भी अलग-अलग पीढ़ियों के लोग हैं; जिन्होंने अपने-अपने ढंग से उनसे अपनी जिज्ञासाओं पर विचार-विनिमय किया है।.

15 आवाजें काँपती रहीं/ शर्मा, अनघ - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **160**पृ. **54592**

हिन्दी कहानी के लिए यह परम्परा और परिवर्तन के बीच का संक्रमण-काल है। मनुष्य के भाव-जगत और कल्पना के विस्तार के नए आयामों के साथ नई पीढ़ी के जिन कथाकारों ने पिछले दशक में अपने नवाचार से पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है, अनघ शर्मा उनमें शामिल हैं। उनकी कहानियाँ अपने कथ्य की नवीनता से कथावस्तु को उजागर करती हैं। इस प्रक्रिया में संवेदना की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है, जिसका निर्वाह इस संकलन की कहानियों की विशेषता है। जीवन के बेहद मामूली लगने वाले क्षणों के गर्भ में पलते संघर्षों और त्रासदी को अर्थवत्ता के साथ सम्प्रेषित करने वाली ये कहानियाँ मानवीय सम्बन्धों का मार्मिक आख्यान रचती हैं। अनघ शर्मा के पास एक समर्थ कथा-भाषा है, बिना कविता हुए, कविता की भाषा तक पहुँचती कथा-भाषा। स्थितियों ही नहीं, व्यवहारों और घटनाओं के महीन ब्यौरों को जीवंतता के साथ रचने वाली उनकी कथा-भाषा जीवन के मर्म को उकेरती है। घटित हुई त्रासदी की टीस हो या मन के गह्वरों में पलते उल्लास की धड़कन, इनका रचाव इतना प्राणवंत है कि पाठक

के भीतर की दुनिया बदलने लगती है। जीवन के अंतर्विरोधों की पहचान और अभिव्यक्ति के लिए यथार्थ की संश्लिष्टता से लेखक का टकराव जिन ध्वनियों को पैदा करता है, उनके पार जाकर अनघ शर्मा अपनी कहानियों के लिए बीज-तत्त्व चुनते हैं। यह बीज-तत्त्व जब विकसित और फलित होता है, जीवन की विराटता प्रकट होती है। 'आवाज़ें काँपती रहीं' की कहानियाँ हिन्दी कहानी के समकालीन परिदृश्य पर अपने नवाचार और सांद्र अभिव्यक्ति के चलते अलग और विशिष्ट छवियों के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज करती हैं।

16 एक वायलिन समंदर के किनारे/ चंदर, कृष्ण - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2019**; **165**पृ. **54593**

इस उपन्यास का नायक-केशव-हजारों साल पीछे छूट गई दुनिया से हमारी दुनिया में आया है । आया है एक लड़की से प्रेम करने की अटूट इच्छा लिये । वह लड़की उसे मिलती भी है, लेकिन त्रासदी यह है कि वह उसकी हत्या कर डालता है ! तो जो व्यक्ति अपनी दुनिया से हमारी दुनिया में प्यार करने आया था, उसने हत्या क्यों की? यही है इस उपन्यास का मुख्य सवाल, जिसका जवाब कृष्ण चंदर ने अपने खास अंदाज में दिया है । इस प्रक्रिया में उनका यह बहुचर्चित उपन्यास वर्तमान सभ्यता के पूँजीवादी जीवन-मूल्यों पर तो प्रहार करता ही है, उन मूल्यों को भी उजागर करता है, जो मानव-सभ्यता को निरंतर गतिशील बनाए हुए हैं । उनकी मान्यता है कि पुरानी दुनिया के सिद्धांतों से नई दुनिया को नहीं परखा जा सकता । नई दुनिया की स्त्री भी नई है-प्रेम के कबीलाई और सामंती मूल्य उसे स्वीकार नहीं । अब वह स्वतंत्र है । वास्तव में सतत परिवर्तनशील मूल्य-मान्यताओं का अंत: संघर्ष इस कथाकृति को जो ऊँचाई सौंपता है, वह अपने प्रभाव में आकर्षक भी है और मूल्यवान भी ।

17 ओ फकीरा मान जा/ सागर, दयाशंकर शुक्ल - राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, **2022**; **152**पृ. **54594**

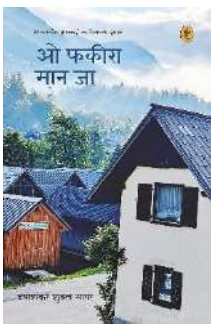

मन यायावर हो और तन की मजबूरी हो कि एक जरूरी रूटीन से खुद को बाँधे रखे तो यह एक दुखद विडम्बना है। लेकिन कहते हैं कि मन अगर अपनी कामनाओं के पर फैलता ही रहे, इच्छा हर रोज और बलवती होती जाए तो राहों की रुकावटों को भी राह आखिर देनी ही पड़ती है। ये यात्राएँ ऐसे ही यायावर की हैं जिन्हें एक के बाद एक संयोगों ने वह दिया जो उनकी आत्मा चाहती थी यानी सफ़र, घुमक्कड़ी और अब वे यहाँ, इस किताब में, एक चितेरे यात्रावृत्तकार के रूप में उपस्थित हैं। जो उन्होंने देखा, जिनसे वे गुजरे उन्हें उतने ही जीते-जागते स्वरूप में हमारे सामने शब्दों में उकेरते हुए। एशिया, यूरोप, अमेरिका,

अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया के विभिन्न देशों की ये यात्राएँ सिर्फ पर्यटन-स्थलों का विवरण नहीं हैं, इतिहास, संस्कृति, समाज, साहित्य और राजनीति का पसमंजर इन वृत्तान्तों को एक सजीव, बहुआयामी लैंडस्केप बनाता है। पता ही नहीं चलता कि पढ़ते-पढ़ते आप कब इन अदेखी गलियों में टहलने लगे जो लेखक के भीतर अब भी अपने शोर और सन्नाटों के साथ जीवित हैं। फ्रांस के राजा की सजा-ए-मौत, नेपोलियन की प्रेमिकाएँ, काफ्का की चिट्ठियाँ, अफ्रीकी नागरिकता वाले अपने को हिन्दुस्तानी बतानेवाले अफ्रीकी, चीन के मकाऊ के जुआघर, अमेरिका के कभी रिटायर न होने वाले और अस्सी से पहले सीनियर सिटीजन नहीं कहलाने वाले लोग, और इन सबको दर्ज करता एक भारतीय मन! इस सफरनामे को पढ़ना एक जीवन्त अनुभव से गुजरना है।

18 ओरहान और अन्य कविताएँ/ शुक्ल, श्रीप्रकाश - राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, **2014**; **160**पृ. **54595**

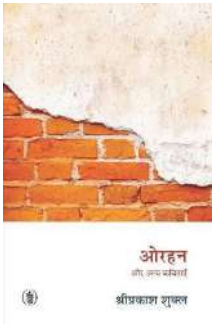

'आँधी में टूटकर गिरा हुआ मकान/तूफ़ान में सूखकर रेत हुई नदी/थककर गिरा हुआ आदमी/ज़्यादे भरोसे का होता है/अपनी-अपनी सम्भावनाओं में/समर्पित सफलता से/ज़्यादा मूल्यवान होती है/तनी हुई विफलता।' श्रीप्रकाश शुक्ल के कविता-संग्रह 'ओरहन और अन्य कविताएँ' में शामिल कविता 'तनी हुई विफलता' की ये पंक्तियाँ रचनाकार के पक्ष को स्पष्ट कर देती हैं। प्रत्येक सजग और समर्थ रचनाकार बार-बार निजी और सामाजिक अनुभवों को चेतना की कसौटी पर कसता है। इसे 'पुन:पाठ' कहें या 'अर्थान्तर' सच्चाई यही है कि हर शब्द एक अनुभव माँगता है और हर अनुभव एक जीवन। इस आन्तरिक प्रक्रिया से गुज़रकर जो कवि समय को व्यक्त कर रहे हैं, उनमें श्रीप्रकाश शुक्ल महत्त्वपूर्ण हैं। प्रस्तुत संग्रह को पढ़ते हुए यह लगना अनायास नहीं कि 'बनारस' इसकी केन्द्रीयता है। बनारस के अनेक प्रसंग, स्थान और स्वभाव कविताओं में निहित व निनादित हैं।...और एक 'सनातन नगर' के बहाने कवि ने आधुनिकता के श्वेत-श्याम आवासों को टटोला है। श्रीप्रकाश शुक्ल में यह कहने का साहस व सलीका भी है कि, 'सब कुछ बहुवचन में नहीं सोचा जा सकता।' अपने तरीक़े से सोचते हुए उन्होंने 'ओरहन', 'एक कवि की तलाश में', 'हमारे समय का एक शोकगीत', 'एक स्त्री घर से निकलते हुए भी नहीं निकलती है' व 'छठ की औरतें' जैसी कई उदाहरणीय कविताएँ रची हैं। इस संग्रह में 'स्त्री' को लेकर कुछ बेहद ख़ास कविताएँ हैं। बिना शब्दों का डमरू बजाए। निजी देसी मुहावरे में श्रीप्रकाश 'लरिकोर' जैसी अनूठी कविता लिखते हैं। भाषा के स्वीकृत विन्यास को सतर्क चुनौती देते हुए रची गई ये कविताएँ हमें संवेदनाओं के एक सघन संसार में ले जाती हैं, जहाँ अपेक्षित भाषाई मुखरता के साथ एक आत्मसंवादी स्वर भी है

जिसमें प्रकृति के साहचर्य से दूर जाते समाज की चालाकियों का पर्दाफ़ाश भी है।

19 कुल बारह/ राय, सत्यजीत - रेमाधव पब्लिकेशन, गाजियाबाद, **2006**; **216**पृ. **54596**

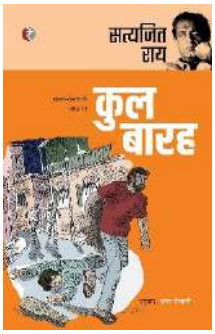

कुल बारह' के लेखक सत्यजित राय का विशेषकर किशोरों के लिए लिखे गए साहित्य के क्षेत्र में न केवल भारत और उनकी मूल भाषा बांग्ला में, बल्कि पूरी दुनिया में विशेष स्थान है। उनकी कृतियाँ किशोरों सहित हर उम्र के पाठकों के बीच लोकप्रियता का कीर्तिमान बना चुकी हैं। • 'कुल बारह' के लेखक भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारतरत्न' से और फ़िल्म जगत का नोबेल पुरस्कार समझे जाने वाले विशेष ऑस्कर से सम्मानित हैं। ऐसे सर्वमान्य रचनाकार की पुस्तकें हरेक पुरस्कार समझे जाने वाले विशेष ऑस्कर से सम्मानित हैं। ऐसे सर्वमान्य रचनाकार की पुस्तकें हरेक पुस्तकालय और व्यक्तिगत संग्रह में होनी ही चाहिए। • 'कुल बारह' में उनकी बारह चुनिन्दा कहानियाँ हैं, जिनमें अभिव्यक्त सत्यजित राय की असाधारण कल्पनाशीलता पाठक को अनजानी रोमांचक दुनिया में पहुँचा देती है।

20 चरित्रहीन/ चट्टोपाध्याय, शरतचंद्र - राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, **2019**; **408**पृ. **54597**

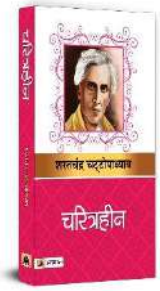

नारी का शोषण, समर्पण और भाव-जगत तथा पुरुष समाज में उसका चारित्रिक मूल्यांकन - इससे उभरने वाला अन्तर्विरोध ही इस उपन्यास का केन्द्रबिन्दु है। शरतचन्द्र ने नारी मन के साथ-साथ इस उपन्यास में मानव मन की सूक्ष्म प्रवृत्तियों का भी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है, साथ ही यह उपन्यास नारी की परम्परावादी छवि को तोड़ने का भी सफल प्रयास करता है। उपन्यास सवाल उठाता है कि देवी की तरह पूजनीय और दासी की तरह पितृसत्ता के अधीन घुट-घुटकर जीने वाली स्त्री के साथ यह अन्तर्विरोध और विडम्बना क्यों है? उपन्यास 'चरित्र' की अवधारणा को भी पुनःपरिभाषित करता है। चरित्र को स्त्री के साथ ही अनिवार्य गुण की तरह क्यों जोड़ा जाता है? वह कैसे चरित्रहीन हो जाती है? उसे चरित्रहीन कहने वाला कौन होता है? यह प्रसिद्ध उपन्यास बार-बार हमें इन सवालों के सामने ला खड़ा करता है। नारी भावनाओं को अभिव्यक्त करने में दक्ष शरत् बाबू इस उपन्यास में उस परिवर्तन को भी रेखांकित करते हैं जो समाज में आया है इसलिए दशकों पहले लिखा गया यह उपन्यास आज भी उतना ही प्रासंगिक है। उल्लेखनीय है कि इस उपन्यास का अनुवाद नए सिरे से किया गया है, उन तमाम अंशों को साथ रखते हुए जो अभी तक उपलब्ध अनुवादों में छोड़ दिए गए थे। एक सम्पूर्ण उत्कृष्ट उपन्यास।

21 चार आँखों का खेल/ मित्रा, बिमल - लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, **2013**; **136**पृ. **54598**

दो मनुष्य देखने में एक जैसे नहीं होते–शायद दो फूल भी नहीं। जीवन के अनुभव भी विभिन्न और विचित्र होते हैं। एक के लिए जो सत्य है, वह दूसरे के लिए नहीं। इसीलिए जीवन के बहुत-से पहलू अछूते और अनदेखे रह जाते हैं। उनको छूना और देखना भी जोखिम से ख़ाली नहीं है। श्लील-अश्लील का सवाल आड़े पड़ता है। मिसेज डी'सा बड़ी भली औरत है। लेकिन पति की मृत्यु के बाद वह अपने बेटे के बराबर एक लड़के से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करती है। आदिम जैविक शुहग के आगे उसकी वह हार क्या सत्य नहीं है? है। उसी कटु सत्य को बिमल बाबू ने सुन्दर बनाया है। चहेते लड़के के हाथ अपने बेटे की हत्या के बाद भी मिसेज डी'सा उस सत्य से नहीं डिग सकी। न्यायाधीश के सामने अन्तिम गवाही के वक़्त भी उस चहेते लड़के की तरफ़ देखते ही वह हत्या का आरोप अपने ऊपर ले लेती है। नारी भी आख़िर मनुष्य है। नारीत्व मनुष्यत्व से अलग कोई चीज़ नहीं है। इसलिए नारीत्व के आगे मातृत्व की हार स्वाभाविक है। लेकिन उस स्वाभाविकता का बयान कितना मुश्किल है। इसे बिमल बाबू ने स्वीकार किया है।

22 चौंसठ सूत्र सोलह अभिमान: कामसूत्र से प्रेरित/ मिश्रा, अविनाश - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2019**; **104**पृ. **54599**

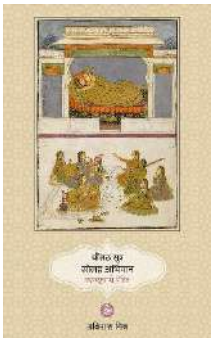

अविनाश मिश्र कविता के अति विशिष्ट युवा हस्ताक्षर हैं। इस संग्रह में शामिल कविताएँ एक लम्बी कविता के दो खंडों के अलग-अलग चरणों के रूप में प्रस्तुत की गई हैं। कवि प्रेम में आता है और साथ लेकर आता है–कामसूत्र। वात्स्यायन कृत कामसूत्र। इसी संयोग से इन कविताओं का जन्म होता है। कवि प्रेम और कामरत प्रेमी भी रहता है और दृष्टाकवि भी। वात्स्यायन की शास्त्रीय शैली उसे शायद अपने विराम, और अल्पविराम पाने, वहाँ रुकने और अपने आप को, अपनी प्रिया को, और अपने प्रेम को देखने की मुहलत पाना आसान कर देती है, जहाँ ये कविताएँ आती हैं और होती हैं। यह शैली न होती तो वह प्रेम में डूबने, उसमें रहने, उसे जीने-भोगने की प्रक्रिया को शायद इस संलग्नता और इस तटस्थता से एक साथ नहीं देख पाता। कोई इन कविताओं को सायास रचा गया कौतुक भी कह सकता है, लेकिन इनका आना और होना इन कविताओं के शब्दों और शब्दान्तरालों में इतना मुखर है कि आप इनकी अनायासता और प्रामाणिकता से निगाह नहीं बचा सकते। ये उतनी ही प्राकृतिक कविताएँ हैं, जितना प्राकृतिक प्रेम होता है, जितना प्राकृतिक काम होता है। ख़ास बातें काम की चौंसठ कलाएँ और स्त्री के सोलह श्रृंगार - इस संग्रह की 80 कविताओं के आलम्बन यही हैं.

इन कविताओं को पढ़ना प्रेम में होने, उसे जीने, अनुभूत करने की प्रक्रिया से गुजरने या स्मृति-आस्वाद को दुहराने जैसा है. कवि का अनुभव-सत्य पाठक के जीवनानुभव के आस्वाद को नया अर्थ देने जैसा है. किताब संग्रहणीय भी है, सुंदर प्रेम-उपहार भी.

23 विचार का आइना: कला साहित्य संस्कृति जयशंकर प्रसाद/ प्रसाद, जयशंकर - राजकमल प्रकाशन, प्रयागराज, **2023**; **168**पृ. **54600**

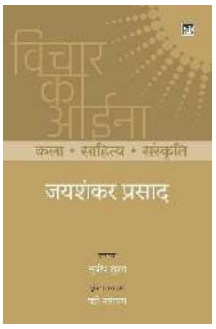

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। आधुनिक हिन्दी साहित्य के शुरुआती निर्माताओं में से एक जयशंकर प्रसाद भारतीय संस्कृति के मूल्यवान तत्वों को साहित्य में पुनर्स्थापित करने वाले लेखक-चिन्तक हैं। उन्होंने दिखाया कि साहित्य इस बात के लिए पूरी तरह से तैयार है कि वह दर्शन की गहराइयों को अपने भीतर जगह दे। उन्होंने इतिहास के नायकों को अपना साहित्य नायक बनाया और परम्परा से निरन्तर संवादरत रहे लेकिन वे अतीतजीवी नहीं थे। आज जब राजनीतिक पूर्वाग्रहों से लैस होकर इतिहास का उत्खनन किया जा रहा है ऐसे में हमें उम्मीद है कि उनके प्रतिनिधि निबन्धों की यह किताब उस धुन्ध को साफ करने में हमारी मदद करेगी जिसकी गिरफ्त में इतिहास और वर्तमान दोनों ही डूबे हुए हैं।

24 झूठा सच: वतन और देश/ यशपाल - राजकमल प्रकाशन, प्रयागराज, **2023**; **540**पृ. **54601**

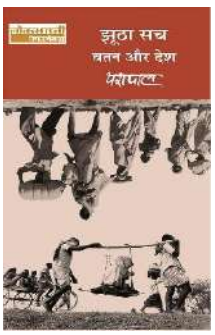

भारत-पाकिस्तान विभाजन भारतीय राज्य के इतिहास का वह अध्याय है जो एक विराट त्रासदी के रूप में अनेक भारतीयों के मन पर आज भी जस-का-तस अंकित है। अपनी ज़मीनों-घरों से विस्थापित, असंख्य लोग जब नक़्शे में खींच दी गई एक रेखा के इधर और उधर की यात्रा पर निकल पड़े थे, यह न सिर्फ़ मनुष्य के जीवट की बल्कि भारतवर्ष के उन शाश्वत मूल्यों की भी परीक्षा थी जिनके दम पर सदियों से हमारी हस्ती मिटती नहीं थी। यशपाल का यह कालजयी उपन्यास उसी ऐतिहासिक कालखंड का महाआख्यान है। स्वयं यशपाल

के शब्दों में यह इतिहास नहीं है, 'कथानक में कुछ ऐतिहासिक घटनाएँ अथवा प्रसंग अवश्य हैं परन्तु सम्पूर्ण कथानक कल्पना के आधार पर उपन्यास है, इतिहास नहीं।' अर्थात् यह उस ज़िन्दगी का आख्यान है जो अक्सर इतिहास के स्थूल ब्योरों में कहीं खो जाती है। 'झूठा सच' के इस पहले खंड 'वतन और देश' में विभाजन के दौरान हुई लूट-पाट और हिंसा के रोंगटे खड़े कर देनेवाले माहौल और उस भीतरी विभाजन का यथार्थवादी अंकन किया गया है जिसके चलते वतन और देश दो अलग-अलग इकाइयाँ हो गए। उपन्यास यह भी जानने की कोशिश करता है कि इसके कारण क्या थे–अंग्रेज़ों की चाल, साम्प्रदायिकता, पिछड़ापन या आर्थिक विषमता या यह सब एक साथ?

25 झूला नट/ पुष्पा, मैत्रेयी - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2018**; **162**पृ. **54602**

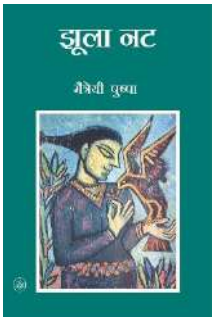

गाँव की साधारण-सी औरत है शीलोμन बहुत सुंदर और न बहुत सुघड़ लगभग अनपढ़μन उसने मनोविज्ञान पढ़ा है, न समाजशास्त्र जानती है । राजनीति और स्त्री-विमर्श की भाषा का भी उसे पता नहीं है । पति उसकी छाया से भागता है । मगर तिरस्कार, अपमान और उपेक्षा की यह मार न शीलो को कुएँ-बावड़ी की ओर धकेलती है, और न आग लगाकर छुटकारा पाने की ओर । वशीकरण के सारे तीर-तरकश टूट जाने के बाद उसके पास रह जाता है जीने का नि:शब्द संकल्प और श्रम की ताकत एक अडिग धैर्य और स्त्री होने की जिजीविषा उसे लगता है कि उसके हाथ की छठी अंगुली ही उसका भाग्य लिख रही है और उसे ही बदलना होगा । झूला नट की शीलो हिंदी उपन्यास के कुछ न भूले जा सकने वाले चरित्रों में एक है । बेहद आत्मीय, पारिवारिक सहजता के साथ मैत्रेयी ने इस जटिल कहानी की नायिका शीलो और उसकी 'स्त्री-शक्ति' को फोकस किया है पता नहीं झूला नट शीलो की कहानी है या बालकिशन की . हाँ, अंत तक, प्रकृति और पुरुष की यह 'लीला' एक अप्रत्याशित उदात्त अर्थ में जरूर उद्भासित होने लगती है । निश्चय ही झूला नट हिंदी का एक विशिष्ट लघु-उपन्यास है|

26 टेढ़ी लकीर/ चुगताई, इस्मत - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2017**; **368**पृ. **54603**

टेढ़ी लकीर -- इस्मत चुग़ताई का यह उपन्यास कई अर्थों में बहुत महत्त्व रखता है । पहला तो ये कि यह उपन्यास इस्मत के और सभी उपन्यासों में सबसे सशक्त है । दूसरे, इस्मत को क़रीब से जानने वाले, इसे उनकी आपबीती भी मानते हैं । स्वयं इस्मत चुग़ताई ने भी इस बात को माना है । वह स्वयं लिखती हैं -- "कुछ लोगों ने ये भी कहा कि टेढ़ी लकीर मेरी आपबीती है मुझे खुद आपबीती लगती है । मैंने इस नाविल को लिखते वक़्त बहुत कुछ महसूस किया है । मैंने शम्मन के दिल में उतरने की कोशिश की है, इसके साथ आँसू

बहाए हैं और क़हक़हे लगाए हैं । इसकी कमज़ोरियों से जल भी उठी हूँ । इसकी हिम्मत की दाद भी दी है । इसकी नादानियों पर रहम भी आया है, और शरारतों पर प्यार भी आया है । इसके इश्क-मुहब्बत के कारनामों पर चटखारे भी लिए हैं, और हसरतों पर दु:ख भी हुआ है । ऐसी हालत में अगर मैं कहूँ कि मेरी आपबीती है तो कुछ ज़्यादा मुबालग़ा तो नहीं—''

27 तथागत फिर नहीं आते/ गर्ग, प्रदीप - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **408**पृ. **54604**

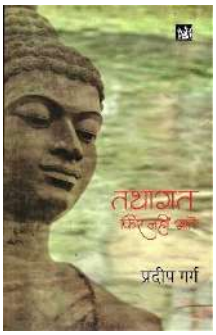

सिद्धार्थ सोलह वर्ष की आयु में विवाह के पश्चात् तेरह वर्ष तक नाच-गाना देखते-सुनते हुए राजभवन में ही बैठे रहे। एक दिन जब राजमहल से बाहर निकले तो एक वृद्ध पुरुष, एक रोगी और फिर एक शव को देख ऐसी विरक्ति मन में उत्पन्न हुई कि गृहत्याग कर परिव्रजित हो गये। यह कथा सामान्यतः प्रचलित अवश्य है परन्तु वस्तुतः गौतम बुद्ध के जीवन और उनकी शिक्षाओं पर प्राचीनतम एवं विद्वानों के मतानुसार सर्वाधिक प्रामाणिक ग्रंथों 'त्रिपिटक' के अनुसार इस कथा की सच्चाई में सन्देह करने के पर्याप्त कारण हैं। तत्कालीन विश्व और भारतवर्ष के समाज तथा उनकी राजनीति को समझने का प्रयास करती हुई यह पुस्तक उन गुरुओं, जिनमें से कई स्वयं को 'बुद्ध घोषित कर चुके थे, के परस्पर तर्क- वितर्क की श्रोता तो बनती ही है; तक्षशिला विश्वविद्यालय में संसार भर से आये ज्ञानपिपासुओं की बौद्धिक चर्चा में सहभागी भी बनती है; और उस अद्भुत वैचारिक आन्दोलन की साझीदार भी जब जम्बूद्वीप के हर नगर, कसबे और गाँव में स्थापित कुतुहलशालाओं में जीवन और अस्तित्व के आधारभूत प्रश्नों पर वाद-विवाद अनवरत ही हो रहा था। साथ ही, कपिलवस्तु, वैशाली, राजगृह, कौशाम्बी, श्रावस्ती इत्यादि नगरों में पड़ाव करते हुए यह यात्रा उस काल के अभूतपूर्व वैभव और जनमानस में विभिन्न कारणों से पनपते विद्रोह की साक्षी बनती है व उस घटनाचक्र की भी जिसने मगध साम्राज्य के जन्म को अवश्यम्भावी कर दिया।

28 तुम पहले क्यों नहीं आये/ सत्यार्थी, कैलाश - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **248**पृ. **54605**

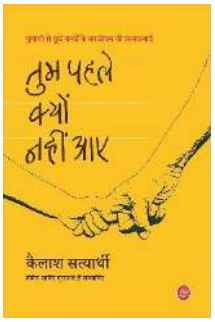

तुम पहले क्यों नहीं आए में दर्ज हर कहानी अँधेरों पर रौशनी की, निराशा पर आशा की, अन्याय पर न्याय की, क्रूरता पर करुणा की और हैवानियत पर इंसानियत की जीत का भरोसा दिलाती है। लेकिन इस जीत का रास्ता बहुत लम्बा, टेढ़ा-मेढ़ा और ऊबड़-खाबड़ रहा है। उस पर मिली पीड़ा, आशंका, डर, अविश्वास, अनिश्चितता, ख़तरों और हमलों के बीच इन कहानियों के नायक और मैं, वर्षों तक साथ-साथ चले हैं। इसीलिए ये एक सहयात्री की बेचैनी, उत्तेजना, कसमसाहट, झुँझलाहट और क्रोध के अलावा आशा, सपनों और संकल्प की अभिव्यक्ति भी हैं। पुस्तक में ऐसी बारह सच्ची कहानियाँ हैं जिनसे बच्चों की दासता और उत्पीड़न के अलग-अलग प्रकारों और विभिन्न इलाक़ों तथा काम-धंधों में होने वाले शोषण के तौर-तरीक़ों को समझा जा सकता है। जैसे; पत्थर व अभ्रक की खदानें, ईंट-भट्ठे, क़ालीन कारख़ाने, सर्कस, खेतिहर मज़दूरी, जबरिया भिखमंगी, बाल विवाह, दुर्व्यापार (ट्रैफ़िकिंग), यौन उत्पीड़न, घरेलू बाल मज़दूरी और नरबलि आदि। हमारे समाज के अँधेरे कोनों पर रोशनी डालती ये कहानियाँ एक तरफ हमें उन खतरों से आगाह करती है जिनसे भारत समेत दुनियाभर में लाखों बच्चे आज भी जूझ रहे हैं। दूसरी तरफ धूल से उठे फूलों की ये कहानियाँ यह भी बतलाती हैं कि हमारी एक छोटी-सी सकारात्मक पहल भी बच्चों को गुमनामी से बाहर निकालने में कितना महत्त्वपूर्ण हो सकती है, नोबेल पुरस्कार विजेता की कलम से निकली ये कहानियाँ आपको और अधिक मानवीय बनाती हैं, और ज़्यादा ज़िम्मेदार बनाती है।

29 नक्षत्रहीन समय में/ वाजपेई, अशोक - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2016**; **128**पृ. **54606**

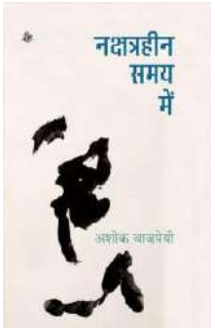

अशोक वाजपेयी का यह पन्द्रहवाँ कविता-संग्रह उनके पहले कविता-संग्रह के प्रकाशन के 50वें वर्ष में प्रकाशित हो रहा है। अपनी कविता के मूल स्वर और सरोकार पर अड़े रहे इस कवि ने हर बार अपनी कविता के संसार में कुछ ऐसा शामिल किया, खोजा है जो पहले नहीं था। इस बार समकालीन राजनीति में जो उथल-पुथल हुई है, उसके प्रतिरोध के रूप में उनकी कविता खड़ी हुई है। टेढ़ेपन पर अटल भरोसा रखनेवाले कवि ने इसमें कुछ सपाटबयानी भी की है। इस सबके बावजूद होने का अवसाद, गहरा आत्मालोचन और अदम्य जिजीविषा सब कुछ यहाँ एक साथ है। सयानापन और ज़िम्मेदारी, शब्द और शिल्प से कुछ खिलवाड़ तथा रोज़मर्रा की ज़िन्दगी का सहज अध्यात्म फिर चरितार्थ है।

30 विचार का आइना: कला साहित्य संस्कृति/ निराला - राजकमल प्रकाशन, प्रयागराज, **2023**; **168**पृ. **54607**

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। हिन्दी कविता के सौन्दर्यशास्त्र को हमेशा के लिए बदल देनेवाले सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ऐसे कवि-दार्शनिक हैं जिन्होंने कविता को न सिर्फ एक नए सौन्दर्य-बोध के साथ सड़क पर उतार दिया अपितु छायावाद को प्रगति की कामना और श्रम के मूल्यों से जोड़ने का भी काम किया। उनकी कविताएँ, कहानियाँ और उपन्यास हों या निबन्ध हों, उनके लेखन और चिन्तन में परम्परा और आधुनिकता के बीच एक द्वन्द्वात्मक रिश्ता सदा बना रहा जिसने उनके लेखन में विलक्षण रूप से नए-नए अर्थ सम्भव किए। उनकी "अन्याय जिधर है उधर शक्ति" जैसी पंक्ति अन्यायी सत्ता और उसके प्रतिरोध में खड़े जन का एक कालजयी रूपक बन गई। हमें उम्मीद है कि उनके कला, साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी प्रतिनिधि निबन्धों की यह किताब पाठकों के समक्ष निराला के चिन्तन की एक मुकम्मल तसवीर पेश कर सकेगी।

31 पच्चीस साल की लड़की/ कालिया, ममता - रेमाधव पब्लिकेशन, गाजियाबाद, **2006**; **152**पृ. **54608**

हिन्दी कथाकारों में ममता कालिया अपनी पैनी दृष्टि, जीवन्तता और साफगोई के लिए, अलग से पहचानी जाती हैं। उनकी रचनाओं की विशेषता है कि वे अपने लेखन में रोजमर्रा के संघर्ष में युद्धरत स्त्री का व्यक्तित्व बड़ी संवेदना से उभारती हैं, साथ ही जीवन की जटिलताओं के बीच जी रही हाड़-मांस की स्त्री के जीवन के उन पहलुओं पर पाठकों की दृष्टि आकर्षित करती हैं, जिन्हें लोग प्रायः नजरअन्दाज करते रहे हैं। यों तो लड़कियों के जीवन में उम्र का सोलहवाँ साल बहुत नाजुक होता है पर पचीस साल की उम्र भी खास मायने रखती है। आधुनिक युग की देन है- लड़कियों की उम्र का पचीसवाँ साल, जिसे ममता जी ने इस संग्रह की कहानियों में रेखांकित किया है। इन कहानियों में उस उम्र की युवतियों की मानसिकता, उनके जीवन-संघर्ष, राग-विराग को कहीं चटक तो कहीं उदास रंगों में प्रस्तुत किया गया है। अलग तेवर लिये इन कहानियों को पढ़ने का आनन्द ही कुछ और है।

32 पहाड़ में फूल/ सिंह, कर्ण - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2005**; **247**पृ. **54609**

1945 में जापान के आधिपत्य से मुक्ति के बाद आधुनिक कोरियाई समाज देश विभाजन तथा सैनिक सत्ता द्वारा जनतांत्रिक अधिकारों के हनन से उत्पन्न संकटों से लगातार जूझता रहा है। इसलिए आज की कोरियाई कविता मूलत: प्रतिरोध की कविता है लेकिन अपनी संस्कृति और जड़ों से गहरे लगाव के चलते इसने प्रतिरोध को अपनी परम्परा के बीच अनोखे ढंग से विकसित किया है। हिन्दी में प्रकाशित समकालीन कोरियाई कविता का यह पहला ऐसा संकलन है, जिससे गुज़रते हुए पाठक न केवल एशियाई कविता के एक विशिष्ट स्वरूप से परिचित होते हैं, बल्कि एक महान राष्ट्र की जातीय, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अस्मिता की झलक भी पाते हैं।

33 विचार का आइना: कला साहित्य संस्कृति/ प्रेमचंद - राजकमल प्रकाशन, प्रयागराज, **2023**; **184**पृ. **54610**

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। प्रेमचन्द ऐसे युगप्रवर्तक लेखक हैं जो हिन्दी और उर्दू कथा साहित्य को एक मुकम्मल शुरुआत देते हैं। वे कहानी और उपन्यास को यथार्थवाद की जनपक्षधर जमीन पर ले आए जहाँ जनसाधारण को नायकत्व मिला। उनकी कहानियों और उपन्यासों ने न सिर्फ हिन्दी कथा साहित्य के विकास के लिए नए द्वार खोले बल्कि उनका गहरा असर समूचे भारतीय कथा साहित्य पर पड़ा। बतौर सम्पादक और चिन्तक उन्होंने जो निबन्ध लिखे, वे भारतीय समाज की बनावट और बुनावट की गहरी पड़ताल करते हैं। वे उन अनेक समस्याओं और विसंगतियों की सटीक पहचान करते हैं जिनसे भारतीय समाज आज तक जूझ रहा है। हमें उम्मीद है कि कठिन वर्तमान से जूझते हुए उनके कला, साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी प्रतिनिधि निबन्धों की इस किताब में हमें अनेक समकालीन सवालों के जवाब के साथ-साथ विचारणीय नए सवाल भी मिलेंगे।

34 बन्द रास्तों का सफ़र/ अनामिका - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **152**पृ. **54611**

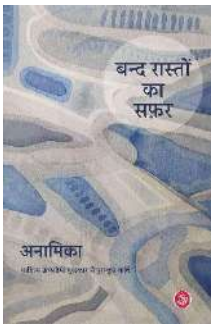

अनामिका की कविताएँ कवि की प्रतिक्रियाओं से नहीं बनतीं, सदेह, चलते-फिरते-जीते लोगों के जीवन-संवाद से निकलती हैं। सड़कों-चौराहों-घरों-दफ़्तरों में जीवन की ज़िद में जुटी इच्छाओं और हताशाओं, उम्मीदों से रचा-बसा एक बड़ा मनुष्यरचित संसार उनकी कविताओं में सदेह दिखाई देता है। इस संग्रह में भी बहुत कम ऐसी कविताएँ हैं जिनमें हमें साधारण लेकिन चेतना-समृद्ध पात्र नहीं मिलते। हर कविता का एक भौतिक संसार है जो हमें वापस अपने आसपास के जीवन की तरफ़ देखने को उकसाता है। नंगे पैरों भुट्टे बेचनेवाली बच्ची हो जिसके पीछे कवि का हृदय जूता होकर चलता है, महिषासुर के नाखून काटकर, नहला-धुलाकर, दफ़्तर भेजनेवाली 'घरेलू दुर्गा' स्त्री हो, फ़ोन पर बातचीत करतीं, अपने जीवन को थाहती वृद्धा बहनें हों, कोरोना के आइसोलेशन वार्ड के भीतर की दुनिया के लोग हों, पैदल घर जाते मज़दूर, आन्दोलन करते किसान हों, कश्मीर में अपनी विरासत को उजड़ते-सूखते देखते बच्चे-बूढ़े हों, हिंसक पौरुष के सम्मुख चीख़ती आसिफ़ा हो या रीतिकालीन काव्य-समयों से बहस करती आधुनिक स्त्रियाँ, यहाँ पात्रों की एक महाकाव्यात्मक मौजूदगी है। आधुनिक संसार के वे बिम्ब जिन्हें हम अपने दैनन्दिन दृश्यों के नगण्य हिस्सों के रूप में अर्थहीन जानकर आगे बढ़ जाते हैं, अनामिका की करुणार्द्र काव्येषणा अपनी सूफ़ियाना छुअन से उनका उदात्तीकरण जीवन-प्रवाह के अनन्त में एक निर्णायक तत्त्व के रूप में कर देती है-शब्दों से ऐसे काम लेती हुई जैसे बिगड़ैल बच्चों को काम पर लगाती कोई माँ। दादियों, नानियों, पुरखा स्त्रियों की निष्कलुष चेतना के सातत्य में उनकी आज की स्त्री अपना पुनर्संधान करती है और स्त्रियों के बहुकेन्द्रिक दुख को सभ्यता परिवर्तक महाभाव में तब्दील कर देती है। भाषा का व्यवहार अनामिका के यहाँ एक स्वतंत्र घटक के रूप में हमेशा मौजूद रहता है। वह इन कविताओं में और सधकर आया है। भाषा उनके लिए सिर्फ़ कहने का साधन-भर नहीं, स्वयं एक चरित्र भी है जिसकी एक भुजा लोक से जुड़ती है तो दूसरी कवि के अपने ध्वनि-बोध से। उनकी यह विशेषता इस संग्रह में और निखरकर आई है।

35 वाह बारह!/ राय, सत्यजीत - रेमाधव पब्लिकेशन, नई दिल्ली, **2023**; **135**पृ. **54612**

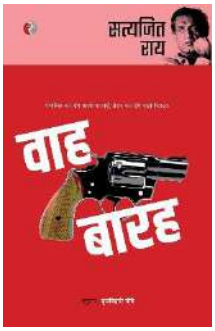

अपनी फिल्मों के जरिये पूरी दुनिया में असाधारण शोहरत हासिल करनेवाले सत्यजित राय ने अपने लेखन से भी अपार लोकप्रियता हासिल की। अपनी अति व्यस्तता के बावजूद उन्होंने बांग्ला भाषा में जिस विपुल परिमाण में साहित्य लेखन किया, वह किसी को भी विस्मित कर सकता है। अपने पितामह उपेन्द्र किशोर रायचौधरी और पिता सुकुमार राय की तरह किशोरों के लिए साहित्य-सृजन की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने जासूस फेलूदा, वैज्ञानिक प्रोफेसर शंकु और बातूनी तारिणी चाचा जैसे नायाब पात्रों को साकार किया। यथार्थ और कल्पना तथा लौकिक और अलौकिक के मेल से उन्होंने दर्जनों ऐसे पात्रों और प्रसंगों को अपनी कहानियों में जीवन्त किया, जिन्हें भुला पाना असम्भव है। सत्यजित राय की कहानियाँ अकल्पनीय रहस्य-रोमांच से भरपूर हैं, पर ये कहानियाँ परम्परागत रहस्य-रोमांच की कहानियों से बिलकुल भिन्न एक नई भाव-भूमि, एक नए संसार से साक्षात्कार कराती हैं। उनकी अधिकतर कहानियाँ हमारी जानी-पहचानी जगहों और लोगों के बीच से ही कुछ ऐसा उद्घाटित करती हैं जो हमें रोमांचित कर देता है और हमारी कल्पनाशीलता को नई गति प्रदान करता है। 'वाह बारह' में सत्यजित राय के लेखन की तमाम रंगतों की बानगी पेश करने वाली एक दर्जन चुनिन्दा कहानियाँ संकलित हैं, जिन्हें पढ़ना निश्चय ही एक अविस्मरणीय अनुभव से गुजरना होगा।

36 बूँद और समुद्र/ नागर, अमृतलाल - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2018**; **472**पृ. **54613**

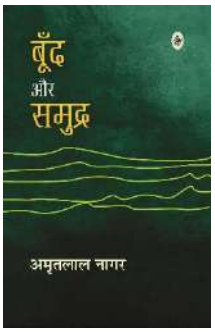

पठनीयता के बल पर हिन्दी उपन्यास को ख्याति और प्रतिष्ठा दिलानेवालों में अमृतलाल नागर का नाम अग्रणी है। कई पीढ़ियों ने उनकी क़लम से निकले हृदयग्राही कथा-रस का आस्वाद लिया है। कथा-साहित्य के कई अविस्मरणीय चरित्रों की सृष्टि का सेहरा भी नागरजी के ही सर बँधा है। डॉ रामविलास शर्मा ने लिखा, "हिन्दी के कुछ लेखक मार्क्सवाद पर पुस्तकें भी लिख चुके हैं लेकिन उनके पात्र वैसे सजीव नहीं होते, जैसे गाँधीवादी लेखक अमृतलाल नागर के 'सेठ बाँकेमल' या 'बूँद और समुद्र' की ताई। इसका कारण यह है की मार्क्सवाद या गांधीवाद ही किसी लेखक को कलाकार नहीं बना देता। कथाकार बनाने के लिए मार्मिक अनुभूति आवश्यक है जो जीवन के हर पहलू को देख सके। सामाजिक जीवन की जानकारी ही न होगी तो दृष्टिकोण बेचारा क्या करेगा?" लखनऊ के नागर, मध्यवर्गीय सामाजिक जीवन का अन्तरंग और सजीव चित्रण करनेवाला यह उपन्यास हिन्दी उपन्यास-परम्परा में एक कालजयी कृति माना जाता है।

37 भारत में महिला आंदोलन: विमर्श और चुनौतियाँ/ आर्य, साधना - राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **352**पृ. **54614**

भारत में महिला आन्दोलनों ने लम्बी दूरी तय की है और वर्तमान में भी उनकी निरन्तरता बनी हुई है। उन्होंने न केवल महिलाओं के मुददों पर बने मौन को तोड़ा है बल्कि अलग-अलग तबकों की महिलाओं द्वारा छेड़े गए संघर्षों की विशिष्टताओं को समझने के साथ-साथ पितृसत्ता की जटिलताओं और उनके अन्तर्सम्बन्धों के बारे में हमारी समझ को भी गहरा किया है। परिवार, विवाह, समुदाय, जाति, यौनिकता और श्रम को नए सिरे से परिभाषित कर महिलाओं पर होनेवाली हिंसा और उत्पीड़न के तमाम रूपों को उजागर किया है। महिलाओं के अनुभवों, संघर्षों और उनके सामने खड़ी चुनौतियों को लेकर उपलब्ध अकादमिक सामग्री और नारीवादी शोध व अध्ययनों ने सामाजिक विज्ञानों में प्रचलित शब्दों, अवधारणाओं और पद्धतियों की आलोचनात्मक समीक्षा पेश की है और यह सन्तोषजनक है कि अलग-अलग अनुशासनों के पाठयक्रम में उसे स्थान मिला है। लेकिन यह भी सच है कि अब भी हिन्दी में ऐसी सामग्री का अभाव बना हुआ है। 'भारत में महिला आन्दोलन' पुस्तक इसी कमी को पूरा करना चाहती है और महिलाओं के आन्दोलनों और अध्ययन के सामने खड़े तमाम मुददों और बहसों पर एक व्यापक नज़रिया पेश करती है।

38 भारतीय राष्ट्रवाद: एक अनिवर्य पथ/ हबीब, एस इरफ़ान (लेखक.); सिंह, प्रभात (अनुवादक.); कुमार, जीतेन्द्र (अनुवादक.) - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **344**पृ. **54615**

राष्ट्रवाद क्या है? राष्ट्रवाद से आप क्या समझते हैं? अच्छा राष्ट्रवादी कौन है? अगर आप सरकार की आलोचना करें तो क्या आपको राष्ट्रद्रोही मान लिया जाए? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जो आजकल की ज़्यादातर बहसों में हावी रहते हैं? लेकिन ये बहसें नई नहीं हैं। आज राष्ट्रवाद के बारे में सबसे ऊपर सुनाई देनेवाली आवाज़ें ज़रूर हमें यह विश्वास दिलाने पर आमादा हैं कि भारतीय राष्ट्रवाद एक संकीर्ण, संकुचित और दूसरे लोगों और संस्कृतियों से भयभीत कोई चीज़ रहा है और आज भी ऐसा ही है, लेकिन भारत के सबसे प्रबुद्ध और सुलझे हुए नेताओं, चिन्तकों, वैज्ञानिकों और लेखकों की समझ इससे बिलकुल अलग है; और ये वो लोग हैं जिन्होंने उन्नीसवीं सदी के आरम्भ से ही इस विषय पर सोचना शुरू कर दिया था। राष्ट्रवाद जिस रूप में आज हमारे सामने है, उसे वजूद में आए सौ साल से ज़्यादा हो गए हैं। दुनिया के इतिहास में इसकी भूमिका को लेकर अनेक इतिहासकारों, राजनीतिशास्त्रियों और समाजवैज्ञानिकों ने अध्ययन किया है। देखा गया है कि राजनीति के लिए यह सबसे निर्णायक कारकों में से एक रहा है। इसकी आलोचना भी ख़ूब हुई है। यह एक दोधारी तलवार है जो लोगों को जोड़ भी सकती है और राजनीति, संस्कृति, भाषा और धर्म के आधार पर बाँट

भी सकती है। ऐतिहासिक महत्त्व के इस संकलन में इतिहासकार एस. इरफ़ान हबीब उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से भारत में राष्ट्रवाद के उदय, विकास और इसके विभिन्न रूपों और चरणों की पड़ताल भारत के सबसे महत्त्वपूर्ण चिन्तकों और नेताओं के विचारों के माध्यम से करते हैं। इस संकलन में उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन के प्रमुख नेताओं और चिन्तकों के वे लेख और भाषण-अंश काफ़ी तलाश के बाद एकत्रित किए हैं जो स्पष्ट करते हैं कि आज़ादी के संघर्ष में देश को रास्ता दिखाने वाले और आज़ादी के बाद भी राष्ट्र की दशा-दिशा पर ईमानदार निगाह रखने वाले इन नेताओं की नज़र में राष्ट्रवाद क्या था और वे किस तरह के राष्ट्र और राष्ट्रवाद को फलते-फूलते देखना चाहते थे! यह किताब हमें बताती है कि आज की परिस्थितियों में हम राष्ट्रवाद को कैसे समझें और कैसे उसे आगे बढ़ायें ताकि एक सर्वसमावेशी, स्वतंत्र और मानवीय राष्ट्र के निर्माण की प्रक्रिया बिना किसी अवरोध के जारी रह सके।

39 मध्यकालीन भारत का आर्थिक इतिहास/ सिंह, सुनील कुमार - लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **239**पृ. **54616**

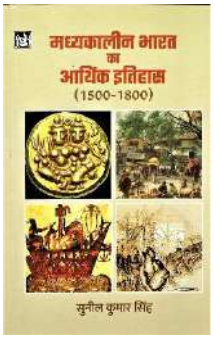

यह पुस्तक नवीनतम स्रोत सामग्री को सन्दर्भित करते हुए लिखी गई है। लेखक ने बड़ी कुशलता के साथ सन्दर्भ ग्रन्थों को समन्वयित किया है कि विशेषज्ञों के अलावा साधारण पाठकों को भी आख्यान बोधगम्य हो सके। इस पुस्तक में मुगलों की नई काराधान व्यवस्था के आने से कृषि के क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली संकटपूर्ण परिस्थितियों को उजागर किया है। लेखक का मानना है कि इस संकट के बावजूद ग्रामीण घरों में सूत कातने और कपड़ा बुनने की परम्पराएँ कायम रहीं। किन्तु मुग़ल नीतियों का दूरगामी परिणाम यह हुआ कि कृषि और शिल्प दो अलग-अलग व्यवसायों के रूप में नज़र आने लगे। अध्याय के अन्त में लेखक ने परम्परागत शिल्पों को स्वतन्त्र व्यवसाय के रूप में प्रस्तुत कर लम्बे अरसे से चली आ रही भ्रान्तियों को दूर किया है। शिल्प उत्पादन के सम्बन्ध में विस्तृत वृत्तान्त मिलता है। दक्षिण भारत के राजस्व इतिहास को समाहित कर इस पुस्तक को पूर्णतः समावेशी बना दिया गया है। पाँचवें अध्याय में मध्यकालीन कराधान की व्यवस्था, शहरी उत्पादन, सिक्कों के प्रकार और प्रसार का उल्लेख है। मध्यकालीन भारत में नाप-तौल की प्रणालियों, मजदूरी और उत्पादकों पर विदेशी पूँजी के बढ़ते दबाव से सम्बन्धित है। लेखक ने तालिकाओं और आँकड़ों की सहायता से व्यापार और व्यवसायों के समक्ष बढ़ती चुनौतियों को स्पष्ट किया है। विश्वास है कि सुधी पाठकों तथा प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर रहे पाठकों को यह रचना समान रूप से पसन्द आएगी।

40 मल्लिका का रचना संसार/ डालमिया, वसुधा - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **158**पृ. **54617**

औरतों के प्रति जब कभी पुरानी धारणा की मुठभेड़ आधुनिकता से होती है, तो भारतीय मन मनुष्य और समाज को पुरुषार्थ के उजाले में देखने-दिखाने के लिए मुड़ जाता है। पर हमारी परम्परा में पुरुषार्थ की साधना वही कर सकता है जो स्वतंत्र हो। और स्त्री की बाबत स्मृतियों की राय यही है कि वह बुद्धि और विवेक से रहित है। इसलिए वह स्वतंत्र हुई तो स्वैराचारिणी बनी। बेहतर हो वह पराश्रयी बन कर रहे। प्रसिद्ध साहित्यकार भारतेन्दु की रक्षिता मल्लिका का निजी जीवन और उनका यह दुर्लभ कृतित्व इस धारणा को उसी के धरातल में जाकर प्रखर चुनौती देता है। काशी के एक सम्पन्न परिवार के कुलदीपक की रक्षिता यह बांग्ला मूल की महिला 19वीं सदी के समाज में सामाजिक स्वीकार से वंचित रहीं। फिर भी उनकी नैसर्गिक प्रतिभा और कुछ हद तक भारतेन्दु के साथ रहते हुए उस प्रतिभा के निरन्तर परिष्कार से वह अपने समय के समाज में स्त्री जाति की असली दशा, विशेषकर युवा विधवाओं और किसी भी वजह से समाज की डार से बिछड़ गई औरतों की दुनिया पर निडर रचनात्मक नज़र डाल सकीं। यह आज भी विरल है, तब के युग में तो वह दुर्लभ ही था।

41 विचार का आइना कला साहित्य संस्कृति: महात्मा गांधी/ गांधी, महात्मा - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **240**पृ. **54618**

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। मोहनदास करमचन्द गांधी ऐसे जननेता हैं जो वैश्विक उपस्थिति रखते हैं। वे भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के ऐसे नायक हैं जिन्होंने इसे जनता का आन्दोलन बना दिया। औपनिवेशिक सत्ता का प्रतिरोध करते हुए उन्होंने सत्य और अहिंसा को अपनी लड़ाई का केन्द्रीय शिल्प बनाया। उन्होंने साध्य ही नहीं साधन की भी पवित्रता की बात की, बेलगाम उपभोग की संस्कृति का विरोध किया। सत्याग्रही के रूप में विरोधी के प्रति भी किसी तरह की कटुता न रखने की बात कही। अपने समय के शीर्ष लेखकों, चिन्तकों और

कलाकारों पर गांधी के विचारों का गहरा असर रहा। वे लोगों से निरन्तर संवादरत रहे और अपने विचारों को मजबूती से रखते रहे। हमें उम्मीद है कि उनके कला, साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी लेखन को पढ़ते हुए इस कठिन समकाल से जूझने की अनेक राहें रोशन होंगी।

42 विचार का आइना कला साहित्य संस्कृति: महादेवी वर्मा/ सिंह, अर्चना (संपादक) - लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली, **2023**; **182**पृ. **54619**

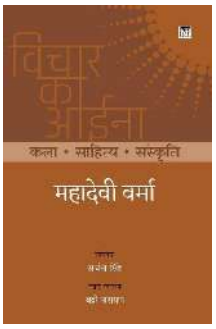

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। छायावाद के आधार स्तम्भों में से एक महादेवी कवि और विमर्शकार दोनों ही रूपों में अद्‌वितीय हैं। अपनी कविताओं में उन्होंने स्त्री जीवन की मार्मिक विडम्बनाओं को स्वर दिया है तो अपनी चर्चित कृति 'शृंखला की कड़ियाँ' में उन्होंने उन अवरोधों की सटीक पहचान की जिन्होंने सदियों से स्त्री को पराधीनता के घेरे में रोक रखा है। स्त्री की अस्मिता की खोज करते हुए अपने पूरे परिवेश के प्रति सहज राग उनके समूचे चिन्तन को उल्लेखनीय विशिष्टता प्रदान करता है। करुणा उनके चिन्तन की धुरी है। हमें उम्मीद है कि उनके कला, साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी प्रतिनिधि निबन्धों की यह किताब उन पाठकों के लिए बहुत उपयोगी होगी जो भारतीय स्त्री जीवन की विडम्बनाओं को समझते हुए उसकी मुक्ति के देशज स्रोतों की तलाश में हैं।

43 मामूली चीज़ों का देवता/ रॉय, अरुंधति - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2005**; **358**पृ. **54620**

मामूली चीज़ों का देवता एक विशुद्‌ध व्यावहारिक अर्थ में तो शायद यह कहना सही होगा कि यह सब उस समय शुरू हुआ, जब सोफ़ी मोल आयमनम आई। शायद यह सच है कि एक ही दिन में चीज़ें बदल सकती हैं। कि चंद घंटे समूची ज़िन्दगियों के नतीजों को प्रभावित कर सकते हैं। और यह कि जब वे ऐसा करते हैं, उन चंद घंटों को किसी जले हुए घर से बचाए गए अवशेषों की तरह - करियाई हुई घड़ी, आँच लगी तस्वीर, झुलसा हुआ फ़र्नीचर - खंडहरों से समेट कर उनकी जाँच-परख करनी पड़ती है। सँजोना पड़ता है। उनका लेखा-जोखा

करना पड़ता है। छोटी-छोटी घटनाएँ, मामूली चीज़ें, टूटी-फूटी और फिर से जोड़ी गईं। नए अर्थों से भरी। अचानक वे किसी कहानी की निर्वर्ण हड्डियाँ बन जाती हैं। फिर भी, यह कहना कि वह सब कुछ तब शुरू हुआ जब सोफ़ी मोल आयमनम आई, उसे देखने का महज़ एक पहलू है। साथ ही यह दावा भी किया जा सकता था कि वह प्रकरण सचमुच हज़ारों साल पहले शुरू हुआ था। मार्क्सवादियों के आने से बहुत पहले। अंग्रेज़ों के मलाबार पर कब्ज़ा करने से पहले, डच उत्थान से पहले, वास्को डि गामा के आगमन से पहले, ज़मोरिन की कालिकट विजय से पहले। किश्ती में सवार ईसाइयत के आगमन और चाय की थैली से चाय की तरह रिसकर केरल में उसके फैल जाने से भी बहुत पहले हुई थी। कि वह सब कुछ दरअसल उन दिनों शुरू हुआ जब प्रेम के क़ानून बने। वे क़ानून जो यह निर्धारित करते थे कि किस से प्रेम किया जाना चाहिए, और कैसे। और कितना। बहरहाल, व्यावहारिक रूप से एक नितान्त व्यावहारिक दुनिया में...वह दिसम्बर उनहत्तर का (उन्नीस सौ अनुच्चरित था) एक आसमानी नीला दिन था। एक आसमानी रंग की प्लिमथ, अपने टेलफ़िनों में सूरज को लिये, धान के युवा खेतों और रबर के बूढ़े पेड़ों को तेज़ी से पीछे छोड़ती कोचीन की तरफ़ भागी जा रही थी...

44 विचार का आइना: कला साहित्य संस्कृति: मुक्तिबोध/ मुक्तिबोध - लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली, **2023**; **168**पृ. **54621**

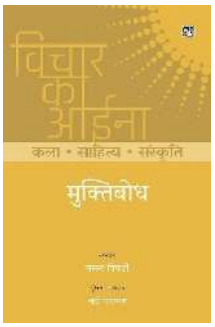

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। मुक्तिबोध ऐसे प्रगतिशील कवि, विचारक हैं जिनके लिखे हुए की प्रासंगिकता दिन पर दिन बढ़ती ही गई है। उनके निबन्धों ने हिन्दी साहित्य और आलोचना पर गहरा असर छोड़ा है। उन्होंने अपने निबन्धों में मध्यवर्ग के सघन और रचनात्मक आत्मसंघर्षों को स्वर देते हुए कला-चिन्तन सम्बन्धी नया सौन्दर्यशास्त्र विकसित किया जिसका असर ऐसा व्यापक रहा कि उनके बाद आलोचना और साहित्य के सौन्दर्यशास्त्र की शब्दावली हमेशा के लिए बदल गई। परवर्ती रचनाकारों के लिए वे सतत रोशनी देनेवाली एक मशाल की तरह रहे। हमें उम्मीद है कि उनके प्रतिनिधि निबन्धों की यह किताब हर उस

भारतीय को अपनी अनिवार्य जरूरत की तरह लगेगी जो साहित्य, संस्कृति और कला से जुड़े हुए सवालों से टकराते हुए अपनी समृद्ध और सुदीर्घ परम्परा की तरफ देखता है।

45 मैं और मैं/ गर्ग, मृदुला - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2016**; **240**पृ. **54622**

रचनात्मकता का पल्लवन बेल की तरह आधार चाहता है, भले ही कैसा भी हो बस आकाश की ओर अवलम्बित, जिसके सहारे ऊँचाइयाँ पाई जा सकें । मैं और मैं इन्हीं भटकाते आधारों का अन्तर्द्वन्द्व है । मृदुला गर्ग का यह उपन्यास अपने भीतर के जगत को सच की तपिश से बचाने की प्रवृत्ति को भी रेखांकित करता है, क्योंकि सत्य से साक्षात्कार करें तो भीतर अपराधबोध पनपता है और झूठ में शरण लेने की लालसा— । मैं और मैं कहानी है मृदुला गर्ग के दो कलात्मक और सशक्त पात्रों-कौशल कुमार और माधवी-के बनते-टूटते सामाजिक और नैतिक आग्रहों की । लेखिका के अनुसार, क्या था माधवी और उसके बीच ? उसके नहीं, माधवी और उसके पति के बीच ? कौशल जैसे प्याले में गिरी मक्खी हो । उसे देखकर वे चीखे नहीं थे, यह उनकी शालीनता थी । मक्खी पड़ा प्याला अलग हटाकर अपने-अपने प्यालों से चाय पीते रहे थे । लग रहा था वे अलग-अलग नहीं, एक ही प्याले से चाय पी रहे हैं और कौशल छटपटाकर बाहर निकल गया है । भिनभिन करके पूरी कोशिश कर रहा है कि उनके सामीप्य में अवरोध पैदा कर दे, पर उसकी भिनभिनाहट उनका मनोरंजन कर रही है, सामीप्य का गठबन्धन और मजबूत कर रही है । जुगुप्सा, वितृष्णा, हिंसा कुछ भी तो नहीं था, जो उसके अस्तित्व-बो/ा को बनाए रखता । एक ओर कौशल का अपने अतीत के लिए समाज को दोषी ठहराना और इस तर्क की बिना पर समाज की भरपूर अवहेलना, वहीं माधवी का समाज की खौफनाक होती शक्ल में अपनी चुप्पी को जिम्मेदार मानना । बाद में कौशल की नजदीकी से वह स्वीकारती है कि सृजन के लिए सब कुछ जायज है, मानवीय रिश्तों का बेहिस्स इस्तेमाल भी-– ।

46 मेरी आवाज सुनो/ आज़मी, कैफ़ी - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2018**; **267**पृ. **54623**

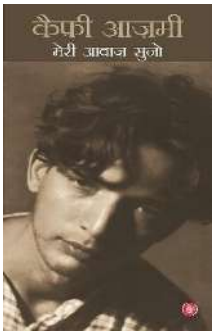

गीत लिखना और ख़ास तौर पर फि'ल्मों के लिए गीत लिखना कुछ ऐसा अमल है जिसे उर्दू अदीब एक लंबे अरसे तक अपने स्तर से नीचे की चीज" समझता रहा है । एक ज"माना था भी ऐसा जब फि'ल्मों में संवाद-लेखक ('मुंशी') और गीतकार सबसे घटिया दर्जे के जीव समझे जाते थे । इसलिए अगर मरहूम 'जोश' मलीहाबादी फि'ल्म-लाइन को हमेशा के लिए ख़ैरबाद कहकर 'सपनों' की उस दुनिया से भाग आए तो इसका कारण आसानी से समझा जा सकता है । उतना ही आसानी से यह बात भी समझी जा सकती है कि क्यों लोगों ने राजा मेहदी अली ख़ान जैसे शायरों पर 'नग़्मानिगार' का लेबिल चिपकाकर उनकी शायराना शख्शियत को एक सिरे से भुला दिया । लेकिन फिर एक ज"माना वह भी आया जब लखनऊ और दिल्ली की सड़कों पर फटे कपड़ों और फटी चप्पलों में मलबूस, हफ्"ते में दो दिन भूखे रहनेवाले तरक्की पसंद शायरों की एक जमात रोजी-रोटी की तलाश में आगे-पीछे बंबई जा पहुँची । हर हाल में अपनी आवाज" सुनाने के लिए कमर बाँधे इन अदीबों में 'मजरूह' और 'मख़्दूम' भी थे, 'साहिर' और 'असद' भोपाली भी थे, जाँनिसार 'अख़्तर' और अख़्तरुल-ईमान भी थे, गुरुबख़्शसिंह 'मख़्मूर' जालंधरी भी थे और हमारे 'कैफी' आज"मी भी थे । यह वह ज"माना था जब फि'ल्म-लाइन में एक चमक-दमक तो थी पर आज की तरह रुपयों की बरसात नहीं होती थीय भारतभूषण जब चोटी के कलाकारों में गिने जाते थे तब भी उनकी माहाना आमदनी कुछ हजार रुपयों तक महदूद थी । फि'ल्म-लाइन के उन दिनों के 'जल्वे' के बारे में मंटो ने जो कुछ बयान किया है, उससे आगे कोई क्या कहे ! लेकिन फिर इन्हीं तरक्की पसंद नौजवान शायरों का कमाल यह रहा कि जहाँ तक गीत-कहानी-संवाद का सवाल है, उन्होंने फि'ल्म-जगत का नक्"शा ही बदलकर रख दिया । नग़्मगी के अलावा अछूते बोल और ऊँचे ख़यालात, भविष्यमुखी दृष्टि और इनसानी जिन्दगी के उरूज को लेकर देखे जानेवाले सपने इन गीतकारों की विशेषता थे । सच तो यह है कि, इन गीतकारों के पहले या उनके बाद, गीत की विधा कभी इतनी ऊँचाई तक नहीं पहुँची जहाँ तक उसे इन शायरों के दस्ते-मुबारक ने पहुँचा दिया । इन शायरों और नग़्मानिगारों के योगदान को समझना हो तो आज के पतन के माहौल से मुकाबला करके समझिए जब पैसा बटोरने के लिए लालायित खोटे सिक्के खरे सिक्कों को बाजार से विस्थापित करने लगे हैं । एक स्वनामधन्य 'गीतकार' ने तो अमीर खुसरो के दो-दो गीत चोरी किए और खुसरो का नाम देने तक की ज"रूरत नहीं समझी, बल्कि गीतों के आख़िरी मिसरे हटा दिए जिनमें खुसरो का नाम आता था । ऐसे ही अँधेरे, काले माहौल में 'कैफी' जैसे शायरों के गीत जुगनुओं की तरह चमकते दिखाई देते हैं और, आप जानें, अल्लामा इक'बाल ने तो जुगनू को परवाने से लाख दर्जा बेहतर ठहराया है कि जुगनू किसी दूसरे की

आग का मुहताज नहीं होता । मुसाफि'र अगर हौसले और हिम्मत का धनी है तो वह जुगनुओं की रौशनी में अपना सफ'र बखूबी जारी रख सकता है ।

47 मैं हार गयी/ भंडारी, मन्नू - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2016**; **164**पृ. **54624**

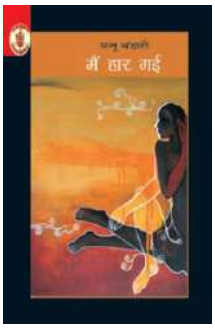

मैं हार गई इस संग्रह की कहानियाँ मानवीय अनुभूति के धरातल पर रची गई ऐसी रचनाएँ हैं जिनके पात्र वायवीय दुनिया से परे, संवेदनाओं और अनुभव की ठोस तथा प्रामाणिक भूमि पर अपने सपने रचते हैं; और ये सपने परिस्थितियों, परिवेश और अन्याय की परम्पराओं के दबाव के सामने कभी-कभी थकते और निराश होते भले ही दिखते हों, लेकिन टूटते कभी नहीं; पुनः-पुनः जी उठते हैं। इस संग्रह में सम्मिलित कहानियों में कुछ प्रमुख हैं: ईसा के घर इनसान, गीत का चुम्बन, एक कमज़ोर लड़की की कहानी, सयानी बुआ, दो कलाकार और मैं हार गई। ये सभी कहानियाँ मन्नूजी की गहरी मनोवैज्ञानिक पकड़, मध्यवर्गीय विरोधाभासों के तलस्पर्शी अवगाहन, विश्लेषण और समाज की स्थापित आक्रान्ता, नैतिक जड़ताओं के प्रति प्रश्नाकुलता आदि तमाम लेखकीय विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिनके लिए मन्नूजी को हिन्दी की आधुनिक कहानी-धारा में विशिष्ट स्थान प्राप्त है।

48 विचार का आइना: रवीन्द्र नाथ टैगोर/ सिंह, वैभव (संपादक) - लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली, **2023**; **240**पृ. **54625**

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। आधुनिक भारतीय मनीषा जिन व्यक्तित्त्वों में सर्वाधिक प्रखर रूप में प्रकट हुई उनमें रवीन्द्रनाथ ठाकुर अग्रणी हैं। साहित्य, संगीत, कला, शिक्षा सहित विभिन्न क्षेत्रों में उनका अप्रतिम योगदान है। परम्परा से लगातार बहस और संवाद करते हुए वे ऐसे चिन्तक के रूप में सामने आते हैं जिनका लक्ष्य सम्पूर्ण मानवता है। वे पश्चिम और पूरब के बीच एक मनोहारी पुल की तरह रहे। गांधी समेत अपने समय की सभी बड़ी राजनैतिक और सांस्कृतिक हस्तियों से उनका सघन संवाद रहा। हमें उम्मीद है कि राष्ट्रवाद के आलोचक और सम्पूर्ण मानवता के उल्लास और विकास के हामी टैगोर के कला,

साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी प्रतिनिधि निबन्धों की यह किताब सभी पाठकों के लिए एक सुन्दर, समृद्ध और न भूलनेवाला अनुभव साबित होगी।

49 रहबरी के सवाल/ चन्द्रशेखर - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2018**; **350**पृ. **54626**

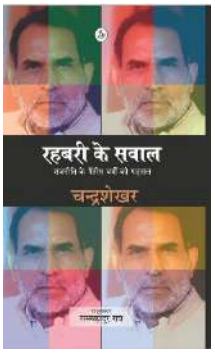

'रहबरी के सवाल' में चन्द्रशेखर के ही शब्दों में उनके जीवन के कुछ प्रमुख पड़ावों और विचार-बिदुओं को नए सन्दर्भों में नए सिरे से प्रस्तुत किया गया है। चन्द्रशेखर का जीवन मूलत: एक भारतीय किसान का जीवन था जिसमें कोई दुराव-छिपाव नहीं। राजनीति के शिखर व्यक्तित्व होते हुए भी वे किसी भी विषय पर बिना लाग-लपेट के और दो टूक बोलते थे। यह भी भारतीय किसान का ही स्वभाव है। चन्द्रशेखर के व्यक्तित्व को समझने में यह अवधारणा बहुत मदद देती है। वे जिस विषय पर बोलते थे, उनके विचारों के केन्द्र में भारतीय समाज की परिस्थितियाँ और समाजवादी लोकतांत्रिक मूल्य प्रमुख रूप से दिखाई देते थे। अपनी वैचारिक दृढ़ता के कारण ही वे उथल-पुथल भरे राजनैतिक झंझावातों के बीच आज भी एक जलती मशाल की तरह दृष्टिगत होते हैं। इस पुस्तक के छह खंडों के नाम हैं : 'राजनीति के सोपान', 'चौदहवीं लोकसभा और संसदीय प्रणाली', 'यक्ष प्रश्न', 'नज़रिया', 'अन्तरंग' तथा 'अनुलग्नक'। इन अध्यायों में उन प्रसंगों पर विस्तृत बातचीत की गई है जो आज के सन्दर्भ में भी जीवन्त हैं। चन्द्रशेखर का जीवन एक कभी न रुकनेवाला यायावर का जीवन था। इसमें कहीं ठहराव नहीं। यही वजह है कि उनका व्यक्तित्व उनके किसी भी समकालीन राजनैतिक व्यक्तित्व की तुलना में अधिक गतिशील दिखता है। इस पुस्तक में सार्थक और जीवन्त प्रश्नों के सहारे चन्द्रशेखर के अद्यतन वैचारिक चिन्तन और निष्कर्षों को दर्ज करने का ऐतिहासिक प्रयास किया गया है। ये विचार हमें आत्ममंथन के लिए तो प्रेरित करते ही हैं, भूमंडलीकरण के शोर में अपनी खोती हुई अस्मिता को बचाने के लिए नई शक्ति से भरते भी हैं। यही वजह है कि यह पुस्तक निराशा के राष्ट्रव्यापी माहौल में नई व्यवस्था बनाने के लिए एक सार्थक हस्तक्षेप की तरह है।

50 विचार का आईना: रामचन्द्र शुक्ल/ नारायण, सूर्य (संपादक) - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **200**पृ. **54627**

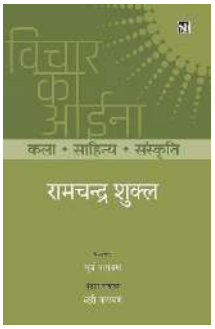

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य के ऐसे प्रस्थान बिन्दु हैं जिनसे टकराए बिना हिन्दी साहित्य का कोई इतिहास मुमकिन नहीं हैं। इसी तरह वे हिन्दी आलोचना के भी आदि पूर्वज हैं। हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखते हुए उन्होंने तार्किक ढंग से न सिर्फ उसका काल-विभाजन प्रस्तुत किया बल्कि मध्यकालीन कवियों के पाठ-भेद के बीच सही पाठ तक पहुँचने की राह भी दिखाई। आलोचना को अधुनातन विचारों से जोड़ते हुए एक मान्य कैनन दिया। उनके निबन्धों ने भारतीय चित्त की मीमांसा के नए द्वार खोले। वे हिन्दी साहित्य की अनेक बहसों के भी प्रस्थान बिन्दु हैं। हमें उम्मीद है कि उनके कला, साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी लेखन को पढ़ते हुए हिन्दी समाज की निर्मिति को समझने के सही और सटीक सूत्र मिलेंगे।

51 विचार का आइना: कला, साहित्य, संस्कृति राम मनोहर लोहिया/ तिवारी, विनोद (संपादक) - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **199**पृ. **54628**

विचार का आईना शृंखला के अन्तर्गत ऐसे साहित्यकारों, चिन्तकों और राजनेताओं के 'कला साहित्य संस्कृति' केन्द्रित चिन्तन को प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने भारतीय जनमानस को गहराई से प्रभावित किया। इसके पहले चरण में हम मोहनदास करमचन्द गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, जवाहरलाल नेहरू, राममनोहर लोहिया, रामचन्द्र शुक्ल, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' और गजानन माधव मुक्तिबोध के विचारपरक लेखन से एक ऐसा मुकम्मल संचयन प्रस्तुत कर रहे हैं जो हर लिहाज से संग्रहणीय है। स्वतंत्रता आन्दोलन की कोख से जन्मे राममनोहर लोहिया ऐसे विचारक राजनेता हैं जिन्होंने अपने लिए लोकतंत्र की आत्मा यानी एक सक्षम और निडर विपक्ष की भूमिका चुनी। जवाहरलाल नेहरू जैसे लोकप्रिय जननेता की असफलताओं को खुलकर सामने रखते हुए उन्होंने दिखाया कि विपक्ष को सरकार की तथ्यात्मक आलोचना करते हुए किस कदर निर्मम होना चाहिए। समाजवाद का भारतीयकरण करते हुए उसे उन्होंने संस्कृति और परम्परा से जोड़ा। धर्म और संस्कृति के अनेक मिथकों को डिकोड करते

हुए उन्होंने परम्परा के जरूरी हिस्सों को पुनर्नवा बनाने का काम किया। हमें उम्मीद है कि उनके प्रतिनिधि निबन्धों की यह किताब उन सबको रास्ता दिखाएगी जो अपनी सुदीर्घ परम्परा और संस्कृति से प्रेम करते हैं और धर्म के राजनीतिक दुरुपयोग और लोकतंत्र को संकुचित करने वाली शक्तियों के हावी होने के खतरों से समाज को बचाना चाहते हैं।

52 विमुक्त जनजातियाँ: बदलाव के पहलु/ गांधी, मल्ली - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **344**पृ. **54629**

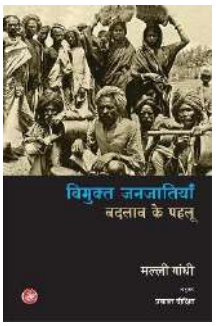

'विमुक्त जनजातियाँ : बदलाव के पहलू' पुस्तक दसारी, डोम्मार, नक्काल, सुगाली, येरुकुला और यनाडी 'अपराधी' जनजातियों के उद्‌गम और विकास के सम्बन्ध में एक शोधपरक अनुसन्धान का परिणाम है। **1904** और **1914** के बीच पाँच प्रमुख अपराधी जनजाति बस्तियाँ गुंटूर के सीतानगरम और स्टुअर्टपुरम, नेल्लोर के कप्पाराला टिप्पा, कुरनूल के सिद्‌धपुरम और मेहबूबनगर जिले के लिंगाला में बनाई गई थीं। इन बस्तियों पर अपराधी जनजाति कानून के अन्तर्गत पुलिस और मिशनरियों का कठोर नियंत्रण था और इन समुदायों को लगभग दासता में रहना पड़ता था। इन बस्तियों की स्थापना से अब तक विमुक्त जनजातियों के विविध पहलुओं पर इस पुस्तक के निबन्ध व्यापक शोध और वस्तुगत निरीक्षण पर आधारित हैं। अभिलेखागारों में संचित सामग्री के सतर्क विश्लेषण के माध्यम से किया गया यह अध्ययन जनगण के रूपान्तरण, बस्तियों के स्वरूप, भू-आवंटन, वित्तीय प्रबन्धन, स्वास्थ्य, शिक्षा और आन्ध्र प्रदेश में विविध जनजाति समुदायों की वर्तमान स्थिति को सामने लाता है।

53 वैशाली की नगरवधू/ चतुरसेन, आचार्य - राजकमल प्रकाशन, प्रयागराज, **2022**; **440**पृ. **54630**

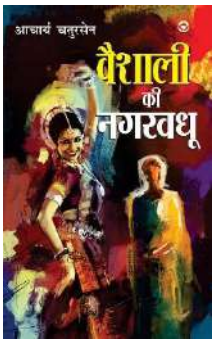

यह उपन्यास एक बौद्‌धकालीन ऐतिहासिक कृति है। लेखक के अनुसार इसकी रचना के क्रम में उन्हें आर्य, बौद्‌ध, जैन और हिंदुओं के साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन करना पड़ा जिसमें उन्हें **10** वर्षों का समय लगा। यह उपन्यास कोई एक-दो महीनों में पूर्ण नहीं हुआ बल्कि आचार्य शास्त्री ने इत्मीनान से इसके लेखन में **1939-1947** तक कि नौ वर्षों की अवधि लगाई। इस उपन्यास के केंद्र में 'वैशाली की नगरवधू' के रूप में इतिहास-प्रसिद्‌ध वैशाली की, सौंदर्य की साक्षात प्रतिमा तथा स्वाभिमान और आत्मबल से संबलित 'अम्बपाली' है जिसने अपने जीवनकाल में सम्पूर्ण भारत के राजनीतिक और सामाजिक परिवेश को प्रभावित किया था। उपन्यास में अम्बपाली की कहानी तो है किंतु उससे अधिक बौद्‌धकालीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक स्थितियों का चित्रण उपलब्ध है और

यही उपन्यासकार का लक्ष्य भी है। विभिन्न संस्कृतियों यथा जैन और बौद्ध और ब्राह्मण के टकराव के साथ-साथ तत्कालीन विभिन्न गणराज्यों यथा काशी, कोशल तथा मगध एवं वैशाली के राजनीतिक संघर्षों का विवरण भी इस कृति में उपलब्ध है। उपन्यास की नायिका फिर भी अम्बपाली ही है जो आदि से अंत तक उपन्यास में छाई हुई है।

54 संघर्ष का सुख/ सौरभ, अभिषेक - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **296**पृ. **54631**

'संघर्ष का सुख' प्रेरक और कर्मठ व्यक्तित्व के धनी उदय शंकर अवस्थी के उदात्त जीवन का प्रामाणिक लेखा है जिन्हें दुनिया उर्वरक क्षेत्र की सबसे बड़ी सहकारी संस्था इफको के प्रबन्ध निदेशक और सीईओ के रूप में अधिक जानती है। पुस्तक से गुज़रते हुए अवस्थी का जो व्यक्तित्व सामने आता है उसमें साधारण की असाधारणता और असाधारण की सादगी का दुर्लभ संयोग सहज ही लक्षित किया जा सकता है। उनके जीवन के खट्टे-मीठे अनुभवों के साथ-साथ उर्वरक उद्योग की प्रौद्योगिकी और प्रबंधन कौशल की बारीकियों के ब्योरे पुस्तक को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान करते हैं। इसमें सार्वजनिक, सहकारी और निजी क्षेत्र की कार्यप्रणाली, उनके अन्तर्सम्बन्ध और अन्तर्विरोध सहित प्रबंधन के विविध पहलू शामिल हैं। अपने बहुआयामी अनुभव तथा अन्तरराष्ट्रीय वाणिज्य और व्यापार की गहरी समझ के साथ किस प्रकार अवस्थी इफको को एक छोटी सहकारी समिति से वैश्विक कारोबारी समूह में परिवर्तित करने में कामयाब हुए, इसकी पूरी कहानी पुस्तक में विस्तार से दी गई है। अपने दूरदर्शी नेतृत्व में अवस्थी ने इफको के कारोबार का विविधीकरण करते हुए देश और देश से बाहर अत्याधुनिक उर्वरक संयंत्रों की स्थापना से लेकर नैनो यूरिया और नैनो डीएपी जैसे क्रांतिकारी उर्वरक विकसित कर विश्व मंच पर भारत और भारतीय सहकारिता का परचम लहराया है। उत्तर प्रदेश के एक छोटे-से गाँव से निकला एक बालक आरंभिक दौर से ही जीवन की जटिलताओं और संघर्षों के बीच से सर्जनात्मक ऊर्जा अर्जित करता हुआ कामयाबी के नित नए-नए कीर्तिमान स्थापित करता है। इस अर्थ में अवस्थी एक प्रेरणास्रोत बनकर सामने आते हैं। देश के किसानों को सशक्त और समृद्ध बनाने के उद्देश्य से अत्याधुनिक प्रौद्योगिकीयुक्त नूतन और नवोन्मेषी उत्पाद विकसित करने की अवस्थी की इच्छा और क्षमता उन्हें 'जनता का सीईओ' बनाती है। यह पुस्तक अवस्थी के साथ-साथ इफको के विकास की भी कहानी है। सही मायने में वे इफको की सफलता के सूत्रधार हैं।

55 सम्पूर्ण कहानियाँ/ भंडारी, मन्नू - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2018**; **498**पृ. **54632**

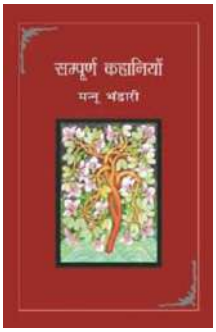

सम्पूर्ण कहानियाँ : मन्नू भंडारी कई बार खयाल आता है कि यदि मेरी पहली कहानी बिना छपे ही लौट आती तो क्या लिखने का यह सिलसिला जारी रहता या वहीं समाप्त हो जाता...क्योंकि पीछे मुड़कर देखती हूँ तो याद नहीं आता कि उस समय लिखने को लेकर बहुत जोश, बेचैनी या बेताबी जैसा कुछ था। जोश का सिलसिला तो शुरू हुआ था कहानी के छपने, भैरवजी के प्रोत्साहन और पाठकों की प्रतिक्रिया से। अपने भीतरी 'मैं' के अनेक-अनेक बाहरी 'मैं' के साथ जुड़ते चले जाने की चाहना में मुझे कुछ हद तक इस प्रश्न का उत्तर भी मिला कि मैं क्यों लिखती हूँ? जब से लिखना आरम्भ किया, तब से न जाने कितनी बार इस प्रश्न का सामना हुआ, पर कभी भी कोई सन्तोषजनक उत्तर मैं अपने को नहीं दे पाई तो दूसरों को क्या देती? इस सारी प्रक्रिया ने मुझे उत्तर के जिस सिरे पर ला खड़ा किया, वही एकमात्र या अन्तिम है, ऐसा दावा तो मैं आज भी नहीं कर सकती, लेकिन यह भी एक महत्त्वपूर्ण पहलू तो है ही? किसी भी रचना के छपते ही इस इच्छा का जगना कि अधिक से अधिक लोग इसे पढ़ें, केवल पढ़ें ही नहीं, बल्कि इससे जुड़ें भी–संवेदना के स्तर पर उसके भागीदार भी बनें यानी कि एक की कथा-व्यथा अनेक की बन सके, बने...केवल मेरे ही क्यों, अधिकांश लेखकों के लिखने के मूल में एक और अनेक के बीच सेतु बनने की यह कामना ही निहित नहीं रहती? मैंने चाहे कहानियाँ लिखी हों या उपन्यास या नाटक–भाषा के मामले में शुरू से ही मेरा नजरिया एक जैसा रहा है। शुरू से ही मैं पारदर्शिता को कथा-भाषा की अनिवार्यता मानती आई हूँ। भाषा ऐसी हो कि पाठक को सीधे कथा के साथ जोड़ दे...बीच मे अवरोध या व्यवधान बनकर न खड़ी हो। कुछ लनोगों की धारणा है कि ऐसी सहज-सरल बकौल उनके सपाट भाषा, गहन संवेदना, गूढ़ अर्थ और भावना के महीन से महीन रेशों को उजागर करने में अक्षम होती है। पर क्या जैनेन्द्रजी की भाषा-शैली इस धारणा को ध्वस्त नहीं कर देती? हाँ, इतना जरूरी कहूँगी कि सरल भाषा लिखना ही सबसे कठिन काम होता है। इस कठिन काम को मैं पूरी तरह साध पाई, ऐसा दावा करने का दुस्साहस तो मैं कर ही नहीं सकती पर इतना जरूर कहूँगी कि प्रयत्न मेरा हमेशा इसी दिशा में रहा है। जब अपनी सम्पूर्ण कहानियों को एक जिल्द में प्रस्तुत करने का प्रस्ताव आया तो मैंने अपनी कहानियों के रचनाक्रम में कोई उलट-फेर नहीं किया। जिस क्रम से संकलन छपे थे, उनकी कहानियों को उसी क्रम से इसमें रखा है–जिससे पाठक मेरी कथा-यात्रा से गुजरते हुए मेरे रचना-विकास को भी जान सकें।

56 सर्दियो का नीला आकाश/ जयशंकर - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **200**पृ. **54633**

हमारा जीवन घटनाओं की स्थूल शृंखला भर नहीं होता। क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं के मशीनी क्रम के समानांतर मन की भित्ति पर घटित होने वाला एक और जीवन हम जीते रहते हैं। आशा, आकांक्षा, हताशा, पश्चाताप, प्रेम और स्मृतियों का जीवन जिससे हम अपने एकांत में संवाद करते हैं। होने के दायित्व तले दबी हमारे आत्मबोध की एक बाँह जो हमें अपने होने के प्रति सचेत भी रखती है, हमें वापस स्थूल संसार में जाने का हौसला भी देती है, हमें सँभालती भी है। हिंदी में जिन कुछ कहानीकारों ने मनुष्य के आस्तित्विक यथार्थ के इस पक्ष को प्रकाशित किया है उनमें जयशंकर भी शामिल हैं। जयशंकर की कहानियों में मनःस्थितियों के स्ट्रोक्स एक चित्रकथा की सी बिम्बावली बनाते हैं, जिनके बीच से गुज़रते हुए हमें अपना अतीत, बीते हुए वे क्षण जिन्हें रोज़मर्रा की भागदौड़ में हम अनदेखा किए रहते हैं, स्मृति की कौंध में झिलमिलाते दिखने लगते हैं। प्रकृति का सजीव, साँस लेता सुदीर्घ लैंडस्केप, हल्की गर्द की तरह धूप में तैरती उदासी, ज़िन्दगी का ठहराव, दिनों का दोहराव, नासूर की तरह दुखता व्यर्थता बोध और एक सूक्ष्म दुख जो आत्मा के ख़ालीपन से, अस्तित्व की अपूर्णता से उपजता है, उनकी इन कहानियों का भूगोल है। सर्दियों का नीला आकाश जयशंकर का नया कहानी संग्रह है। अपने अलग-अलग परिवेश में अपने-अपने जीवन के अर्थान्वेषण में डूबे इन कहानियों के पात्र हम पाठकों को मनुष्य के रूप में अपनी इयत्ता के प्रति नए सिरे से सजग और संवेदनशील बनाते हैं।

57 सावरकर: कालापानी और उसके बाद/ पांडे, अशोक कुमार - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **256**पृ. **54634**

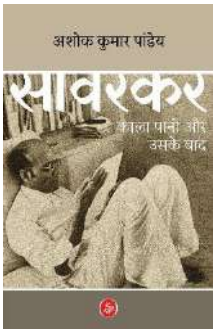

यह किताब एक सावरकर से दूसरे सावरकर की तलाश की एक शोध-सिद्ध कोशिश है। सावरकर की प्रचलित छवियों के बरक्स यह किताब उनके क्रांतिकारी से राजनेता और फिर हिन्दुत्व की राजनीति के वैचारिक प्रतिनिधि तथा पुरोधा बनने तक के वास्तविक विकास क्रम को समझने का प्रयास करती है। इसके लिए लेखक ने सावरकर के अपने विपुल लेखन के अलावा उनके सम्बन्ध में मिलने वाली तमाम पुस्तकों, तत्कालीन ऐतिहासिक स्रोतों, समकालीनों द्वारा ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज़ों आदि का गहरा अध्ययन किया है। यह सावरकर की जीवनी नहीं है, बल्कि उनके ऐतिहासिक व्यक्तित्व को केन्द्र में रखकर स्वतंत्रता आन्दोलन के एक बड़े फ़लक को समझने-पढ़ने का ईमानदार प्रयास है। कहने की ज़रूरत नहीं कि राष्ट्र की अवधारणा की आड़ लेकर क़िस्म-क़िस्म की ऐतिहासिक, राजनीतिक और सामाजिक विकृतियों के आविष्कार और प्रचार-प्रसार के मौजूदा दौर में इस तरह के निष्पक्ष अध्ययन बेहद ज़रूरी हो चले हैं। अशोक कुमार पांडेय ने इतिहास सम्बन्धी अस्पष्टताओं की वर्तमान

पृष्ठभूमि में कश्मीर और गांधी के सन्दर्भ में अपनी पुस्तकों से सत्यान्वेषण का जो सिलसिला शुरू किया था, यह पुस्तक उसका अगला पड़ाव है और इस रूप में वर्तमान में एक आवश्यक हस्तक्षेप भी।

58 सुजान हरबोला/ रॉय, सत्यजीत - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **104**पृ. **54635**

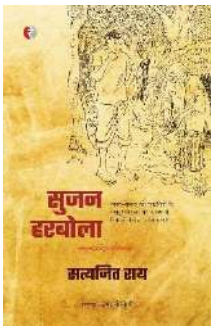

अपनी फिल्मों के जरिये पूरी दुनिया में असाधारण शोहरत हासिल करनेवाले सत्यजित राय ने अपने लेखन से भी अपार लोकप्रियता हासिल की। अपनी अति व्यस्तता के बावजूद उन्होंने बांग्ला भाषा में जिस विपुल परिमाण में साहित्य-लेखन किया, वह किसी को भी विस्मित कर सकता है। अपने पितामह उपेन्द्र किशोर रायचौधरी और पिता सुकुमार राय की तरह किशोरों के लिए साहित्य-सृजन की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने जासूस फेलूदा, वैज्ञानिक प्रोफेसर शंकु और बातूनी तारिणी चाचा जैसे नायाब किरदारों को साकार किया। यथार्थ और कल्पना तथा लौकिक और अलौकिक के मेल से उन्होंने दर्जनों ऐसे पात्रों और प्रसंगों को अपनी कहानियों में जीवन्त किया, जिन्हें भुला पाना असम्भव है। सत्यजित राय की कहानियाँ अकल्पनीय रहस्य-रोमांच से भरपूर हैं, पर ये कहानियाँ परम्परागत रहस्य-रोमांच की कहानियों से बिलकुल भिन्न एक नई भाव-भूमि, एक नए संसार का साक्षात्कार कराती हैं। उनकी अधिकतर कहानियाँ हमारी जानी-पहचानी जगहों और लोगों के बीच से ही कुछ ऐसा उद्घाटित करती हैं जो हमें रोमांचित कर देता है और हमारी कल्पनाशीलता को नई गति प्रदान करता है। 'सुजन हरबोला' में संकलित कहानियाँ अपने रचाव और रंगत में लोककथाओं जैसी हैं–सहज, घटनापूर्ण किन्तु सार्वकालिक मूल्यबोध से लैस। इन कहानियों में मानव स्वभाव के उन पक्षों का बखूबी उद्घाटन हुआ है, जहाँ भविष्य के प्रति कुतूहल और उम्मीद हमेशा उपस्थित रहते हैं।

59 स्त्री-मुक्ति की सामाजिक: मध्यकाल और नवजागरण/ अनामिका - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **168**पृ. **54636**

आज भी स्त्रीवाद के सामने सबसे बड़ा लक्ष्य यही है कि वह मनुष्य मात्र में स्त्री-दृष्टि का विकास करे। यह सिर्फ़ स्त्रियों की अपनी मुक्ति का मसला नहीं है, पुरुष को भी उन जकड़बदियों से मुक्त होने की ज़रूरत है जो एक तरफ़ उसे शक्ति देती हैं कि वह किसी को बाँध सके तो दूसरी तरफ़, ख़ुद उसे भी एक चौखटे में जड़ देती हैं। बहुत कुछ बदला है, बहुत कुछ बदलने-बदलने को है। संस्थाओं-प्रतिष्ठानों का पौरुष ढीला पड़ा है और स्त्री-तत्व के प्रवाह के लिए परिवार से लेकर राष्ट्र तक, सभी जगह नए झरोखों-रास्तों ने जन्म लिया है। ख़ासतौर से लेखन में स्त्री का स्वर निर्णायक भंगिमा और अपनी विशिष्ट

पहचान के साथ उभरकर आया है। स्त्री ने निसंकोच भाव से अपनी एक भाषा गढ़ी है, आलोचना की अपनी प्रविधियाँ विकसित की हैं, उन विशेषताओं को जाना है जो उसे एक बेहतर मनुष्य बनाती हैं और यह भी समझा है कि उसका होना संसार के लिए कितना ज़रूरी है। लेकिन उसका सहगामी और अब तक वर्चस्व का केन्द्र रहा पुरुष भी क्या उतना ही बदला है? और क्या स्त्री का यह आत्मविश्वास अचानक हुई कोई घटना है या पीछे इतिहास में शुरू हुई किसी लम्बी प्रक्रिया का प्रतिफल? 'स्त्री-मुक्ति की सामाजिकी : मध्यकाल और नवजागरण' हिन्दी के मध्यकालीन काव्य तथा सामाजिक सौन्दर्यबोध के पुनर्पाठ के माध्यम से इसी प्रक्रिया का लेखा-जोखा करने की कोशिश करती है। मध्यकाल और पुनर्जागरण के दौर की रचनाओं, रचनाकारों और दूर भविष्य तक को प्रभावित करने वाली प्रवृत्तियों को रेखांकित करते हुए यह किताब स्त्री-विमर्श के उदात्त पक्षों का अन्वेषण और समय तथा समाज की सीमाओं का आकलन दोनों करती है। मध्यकालीन नायिकाओं और स्त्री-रचनाकारों की विनोद-वृत्ति जो उनकी आन्तरिक मुक्ति की ही एक भंगिमा थी; रहीम की 'नगर शोभा' में स्त्रियों का चित्रण और उसकी सामाजिकी; स्त्री भक्त-कवियों का अस्मिताबोध और आधुनिक स्त्री-दृष्टि से रीतिकाल के पुनर्पाठ से लेकर मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में आई स्त्री तक, अनामिका ने इस पुस्तक में अपनी रस-सिद्ध आलोचना-शैली में एक पूरे युग का जायज़ा लिया है।

60 हो गई आधी रात/ बागची, अमिताभ - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, **2022**; **269**पृ. **54637**

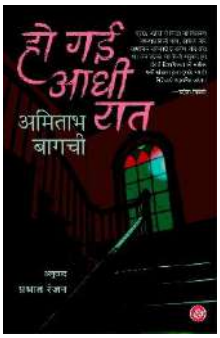

मनुष्य-मन की महीन पड़ताल और सामाजिक-राजनीतिक व मानवीय परिस्थितियों के बारीक तंतुजाल से जूझती भाषा, वह पहली चीज़ें हैं जो इस उपन्यास को एक यादगार अनुभव बनाती हैं। पात्रों और एक विस्तृत काल-खंड में फैली घटनाओं के सूक्ष्मतम घटकों तक पहुँचने की लेखक की साहसी आकांक्षा जो इस औपन्यासिक वितान की पंक्ति-पंक्ति में न्यस्त है वह इस अनुभव को और घनीभूत करती है। साथ ही आज़ादी के पहले और बाद के भारतीय समाज, और उसकी भावगत-मूल्यगत बनावट की संवेदनशील व सटीक समझ भी जो सहज ही इस पाठ को एक बड़ी रचना के रूप में स्थापित कर देती है। कहानी लाला मोतीचंद और उसके तीन बेटों की है। बेटों में एक अपने पिता की तरह ही व्यावसायिक बुद्धि का धनी दीनानाथ है, दूसरा धन-संग्रह के प्रति नितांत उदासीन और कविहृदय दीवानचंद है और तीसरा मक्खन लाल जो आगरा में लाला के एजेंट किशोरी की पत्नी से हुआ है और विचारों से मार्क्स और भगतसिंह का अनुयायी है। इनकी कहानी के साथ ही जुड़ी है लाला मोतीचंद के सेवक

मांगेराम और उसकी तीन पीढ़ियों की कहानी जिनका पुरुषार्थ लाला, उनकी हवेली और उनकी औलादों की सेवा के संदर्भ में साकार होता है। कथा के इन दो छोरों के बीच एक कहानी पुरस्कारप्राप्त हिन्दी उपन्यासकार विश्वनाथ की भी है जो छोटे-छोटे टापुओं की तरह इस धारा के बीच-बीच में पत्रों की शक्ल में उभरती रहती है। अनुमान लगाया जा सकता है कि मुख्य कथा और उसके पात्र विश्वनाथ की ही रचना हैं और लेखक के रूप में उनके सफल और महत्वाकांक्षी लेकिन पिता और पति के रूप में उनके पश्चाताप-ग्रस्त जीवन का ही प्रतीकात्मक विस्तार हैं जो हिन्दी-उर्दू कविता के उद्धरणों के साथ इन पत्रों में खुलता चलता है। इस गझिन परन्तु रोचक कथा-संकुल में हमें अपने समाज और देश का लगभग हर पहलू देखने को मिल जाता है। हमारा परिवार, उसकी सत्ता-संरचना, एक प्राचीन जातीय समूह के रूप में हमारी धार्मिक व नैतिक बुनावट, अलग-अलग तबकों के स्त्री-पुरुषों की नियति, संपत्ति की अवधारणा और उसके प्रति भारतीय मानस के विविधवर्णी और अंतर्विरोधी दृष्टिकोण, औपनिवेशिक भारत में व्यवसाय तथा उद्यमिता के स्वरूप और अंततः मनुष्य की नियति के लोमहर्षक आलेख, इन सबको हम इस उपन्यास के विराट कैनवस पर अपने तमाम संभव शेड्स के साथ चलते-फिरते देख पाते हैं। बिना किसी अतिरंजना के कहा जा सकता है कि यह एक परिपक्व भारतीय उपन्यास है।

61 अंदाज़-ए-बयान उर्फ़ रवि कथा/ कालिया, ममता - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2020**; **196**पृ. **54638**

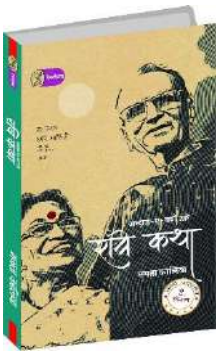

बेमिसाल कथाकार जोड़ी रवीन्द्र कालिया और ममता कालिया की समूचे भारतीय कथा साहित्य में अमिट जगह है। साथ रहते और लिखते हुए भी दोनों एक-दूसरे से भिन्न गद्य और कहानियाँ लिखते रहे और हिन्दी कथा साहित्य को समृद्ध करते रहे। रवीन्द्र कालिया संस्मरण लेखन के उस्ताद रहे हैं। ग़ालिब छुटी शराब हो या सृजन के सहयात्रियों पर लिखे गये उनके संस्मरण हों, उन्हें बेमिसाल लोकप्रियता मिली। उन संस्मरणों में जो तटस्थता और अपने को भी न बख़्शने का ज़िंदादिल हुनर था वह इसलिए सम्भव हो पाया कि वह अपने निजी जीवन में भी उतने ही ज़िंदादिल रहे। रविकथा इन्हीं रवीन्द्र कालिया के जीवन की ऐसी रंग-बिरंगी दास्तान है जो ममता जी ही सम्भव कर सकती थीं। पढ़ते हुए हम बार-बार भीगते और उदास होते हैं, हँसते और मोहित होते हैं। रविकथा एक ऐसी दुनिया में हमें ले जाती है जो जितनी हमारी जानी-पहचानी है उतनी ही नयी-नवेली भी। ऐसा इसलिए नहीं होता कि वे रवीन्द्र कालिया को नायक बनाने की कोई अतिरिक्त कोशिश करती हैं बल्कि इसलिए होता है कि इस किताब के नायक 'रवि' का जीवन और साहित्य को देखने का नज़रिया उन्हें

एक अलग कोटि में खड़ा करता है। किसी भी स्थिति में हार न मानना, यथार्थ को देखने का उनका विटी नज़रिया, डूबे रहकर भी निर्लिप्त बने रहने का कठिन कौशल उन्हें सहज ही ऐसा व्यक्तित्व देता है जो एक साथ लोकप्रिय है तो उतना ही निन्दकों की निन्दा का विषय भी। यह अलग बात है कि वे निन्दकों की निन्दा में भी रस ले लेते हैं। यह किताब सम्पादक रवीन्द्र कालिया के बारे में भी बताती है कि काम करने का उनका जुनून तब भी जस का तस बना रहता है जब वे अस्पताल से तमाम डाक्टरी हिदायतों के साथ बस लौट ही रहे होते हैं। यूँ ही कोई रवीन्द्र कालिया नहीं बन जाता। वह कैसे बनता है, रविकथा इसी का आख्यान है। यह किताब एक साथ निजी और सार्वजनिक रंग रखती है। इसमें एक तरफ़ तो हिन्दी की साहित्यिक संस्कृति का आत्मीय वर्णन मिलता है तो दूसरी तरफ़ रविकथा में दाम्पत्य जीवन के भी अनेक ऐसे प्रसंग हैं जो बराबरी की बुनियाद पर ही महसूस किये जा सकते हैं। यह किताब रवीन्द्र कालिया और ममता कालिया के निजी जीवन की दास्तान भी है। यहाँ निजी और सार्वजनिक का ऐसा सुन्दर मेल है कि इसे उपन्यास की तरह भी पढ़ा जा सकता है। इसमें एक कद्दावर लेखक पर उतने ही कद्दावर लेखक द्वारा लिखे गये जीवन प्रसंग हैं जिनके बीच में एक- दूसरे के लिए प्रेम, सम्मान और बराबरी की ऐसी डोर है कि एक ही पेशे में रहने के बावजूद उनका दाम्पत्य कभी उस तनी हुई रस्सी में नहीं बदलता जिसके टूटने का ख़तरा हमेशा बना रहता है। रविकथा को इसके खिलते हुए गद्य के लिए भी पढ़ा जाना चाहिए। हर हाल में पठनीय किताब।

62 अनुवाद की व्यापक संकल्पना/ सिंह, दिलीप - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2011**; **156**पृ. **54639**

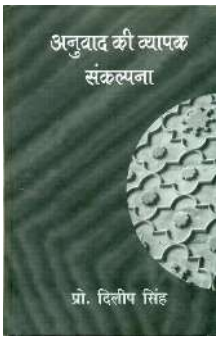

दिलीप सिंह की पुस्तक 'अनुवाद की व्यापक संकल्पना' अनुवाद के पारंपरिक विचारों से आगे बढ़कर भाषाविज्ञान और सामाजिक विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में अनुवाद को देखती है। इसमें अनुवाद की उपभोक्ता सापेक्षता, लक्ष्य भाषा-केंद्रिकता और समतुल्यता के सिद्धांत पर गहराई से चर्चा की गई है। पुस्तक अनुवाद प्रक्रिया, सामाजिक दायित्वों और समस्याओं को भी अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के संदर्भ में स्पष्ट करती है।

63 अन्य भाषा शिक्षण के बृहत् सन्दर्भ/ सिंह, दिलीप - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2010**; **156**पृ. **54640**

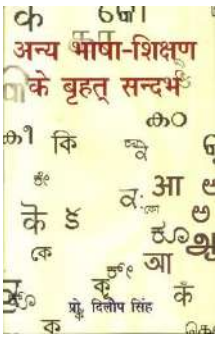

भाषा सामाजिक व्यनवहार का प्रमुख घटक है और सामाजिकों द्वारा भाषा के माध्यहम से ही अपने कार्यव्यातपारों का संचलन एवं संवर्धन किया जाता है। सिद्धांत किसी भी भाषा को मानक रूप में प्रतिस्थासपित करते हैं परंतु सिद्धांतों एवं नियमों की अत्यकधिक जटिलता प्रयोक्ताषओं को उससे दूर करती है और प्रयोक्ता एक वैकल्पिक मार्ग तलाश लेता है। विश्वा की अधिकांश आधुनकि भाषाओं के विकास के कारणों में से यह भी एक कारण रहा है। जब भाषा अत्यमधिक व्यानकरणिक नियमबद्ध हो जाती है तो वह सामान्यं प्रयोक्ताो की पहुंच से बाहर हो जाती है और उसका अपभ्रंश रूप विकसित होने लगता है। नियमों की आबद्धता जरूरी है परंतु भाषा की संप्रेषणीयता पर भी पर्याप्ते ध्या न दिया जाना आवश्यतक है क्योंयकि यदि कोई प्रयोक्तात अपनी भाषा के माध्य म से अपने विचारों के संप्रेषण में असफल रहता है तो उसका भाषा ज्ञान कभी भी पूरा नहीं कहा जा सकता है। प्रयोग के व्याावहारिक पक्षों पर पर्याप्तर ध्या न दिया जाना चाहिए ताकि वह सुगमतापूर्वक प्रयोग में लाई जाती रहे। हिंदीतर भाषियों के लिए हिंदी के व्यापवहारिक रूप पर विचार करते हुए ही प्रोफेसर दिलीप सिंह ने इस ग्रंथ में व्यावहारिक पक्षों पर पर्याप्तप बल देते हुए लिखा है कि ‘‘अन्य भाषा शिक्षण (द्वितीय और विदेशी) के इसी परिवर्तनशील स्वरूप को इस पुस्तक में प्रस्तुत किया गया है।

64 अपने खेत में/ नागार्जुन - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2012**; **63**पृ. **54641**

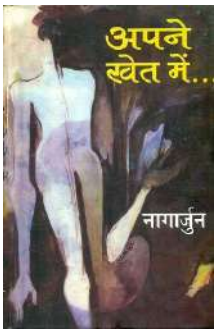

नागार्जुन की विशेषता यह है कि उन्होंने अपने यथार्थवाद को निरन्तर ऊँचे धरातल पर पहुँचाया है। उनके राजनीतिक व्यंग्य कितने पैने हुए हैं, उनमें जीवन के अन्तर्विरोधों की समझ दृढ़ हुई है, उनका भौतिकवादी रुझान अविचल रहा है, इसे हम सभी जानते हैं। 'हरिजन गाथा' और 'छोटी मछली... बड़ी मछली...' जैसी कविताओं की रचना करके नागार्जुन ने न केवल अपने आपको, वरन प्रगतिशील कविता को, हिन्दी साहित्य को मूल्यवान अवदान किया है। उत्तरोत्तर अपने प्रखर यथार्थवादी और दृढ़ भौतिकवादी उन्मेष के कारण नागार्जुन हिन्दी साहित्य में निराला के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण पद के हक़दार हुए हैं।

65 आख़िर ऐसा क्या कह दिया मैंने/ नागार्जुन - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2014**; **64**पृ. **54642**

आरम्भ से ही नागार्जुन की कविताओं का एक बड़ा हिस्सा प्रकृति से सम्बन्धित रहा है। प्रकृति उन्हें आकर्षित करती रही है और उनका यात्री मन उसमें रमता रहा है। प्रकृति से इस गहरे जुड़ाव के कारण नागार्जुन ने उससे एक नया रचनात्मक रिश्ता बनाया है। वे प्रकृति का महज दृश्य-वर्णन नहीं करते बल्कि उसे मानवीय संवेदना से सीधे जोड़कर देखते हैं। यह संवेदनात्मक जुड़ाव इस हद तक है कि प्रकृति नागार्जुन के जीने में शामिल है। यही वजह है कि प्रकृति के परिवर्तित होते संस्पर्श उनकी मनःस्थितियों के बदलाव का कारण भी बनते हैं। नागार्जुन के इस नए संग्रह में प्रकृति से नागार्जुन के इस रचनात्मक 'पारिवारिक' रिश्ते को आप सहज ही अनुभव करेंगे। लेकिन इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये कविताएँ प्रकृति-काव्य होकर भी महज प्रकृति के बारे में नहीं हैं, बल्कि कुल मिलाकर मनुष्य की ज़िन्दगी के संघर्ष और उसके हर्ष-विषाद के बारे में ही हैं। यही जनकवि नागार्जुन के काव्य का मूल कथ्य भी रहा है। पौड़ी गढ़वाल के पर्वतीय ग्रामांचल जहरीखाल में प्रवास के दौरान लिखी गईं ये कविताएँ नागार्जुन के कवि-मन की एक विशिष्ट दुनिया सामने लाती हैं। ये आह्लादकारी होने के साथ-साथ मार्मिक भी हैं।

66 आलोचना और जनतंत्र/ सिंह, नामवर - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2023**; **312**पृ. **54643**

आलोचक की हैसियत बीज की-सी है और जब मुझे बीज भाषण देने का अवसर मिला है तो निराला की एक बहुत पुरानी कविता याद आती है-'हिन्दी के सुमनों के प्रति'- जिसमें दो पंक्तियाँ हैं : 'फल के भी उर का कटु त्यागा/ मेरा आलोचक एक बीज'। आलोचक की हैसियत बीज की-सी ही है। इस पूरे सांग रूपक में अगर आप देखें-तो पेड़, फल, फूल तो हैं लेकिन आलोचक की जगह उस बीज की तरह है, जो सबसे नीचे रहता है, ज़मीन के अन्दर रहता है, पद हल में विराजता है। वे तो आकाश पूजन करने वाले हैं और बड़ी ऊँचाइयों को छूते हैं, लेकिन यह जो बीज है, रहता है फल के हृदय में ही। फल मीठा होता है, बीज कड़वा होता है। फल कोमल होता है, बीज कठोर होता है। याद करें-आम की गुठली। अब विडम्बना यह है कि आलोचक का जो बीज भाषण है, उसे कड़वा होना ज़रूरी है। यह उसकी प्रकृति है। अब तक के भाषणों में थ्योरी पर ही मुख्य बल है। ऐसा मालूम होता है जैसे भारत में भी हम चाहते हैं कि यह पूरा युग 'एज ऑफ़ थिअरी' के नाम से जाना जाये जैसे अमरीका में किसी समय 'एज ऑफ़ क्रिटिसिज़्म' हुआ था। ख़तरा यही है- 'थ्योरी' की भूख माँग की आकांक्षा ! पश्चिम के दो दशक 'थ्योरीज' के हैं। हर कोई जानता है कि इस बीच जितनी 'थ्योरी' आयी है, उसकी प्रयोगशाला फ्रांस है और उसका कारख़ाना अमरीका के विश्वविद्यालय हैं। दुनिया भर के जो नाम आते हैं-फूको, लाकाँ, देरिदा वगैरह

यहीं से हैं। कुछ चीजें होती हैं जो पैदा कहीं होती हैं, लेकिन शोभा उनकी अन्यत्र होती है। जैसे फ्रांस में पैदा हुईं और अमरीकी विश्वविद्यालय में छायी हुई हैं।

67 ऐसे भी हम क्या! ऐसे भी तुम क्या!/ नागार्जुन - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2012**; **72**पृ. **54644**

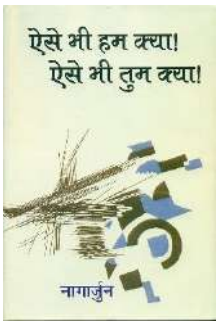

"ऐसे भी हम क्या! ऐसे भी तुम क्या!" नागार्जुन द्वारा लिखित एक प्रसिद्ध कविता है, जो उनके संग्रह "रत्नगर्भा" का हिस्सा है। यह कविता जीवन की विसंगतियों, व्यर्थ के तर्क-वितर्क, और आलस पर व्यंग्य करती है, जहाँ लोग दूसरों की सफलता पर सिर पीटते हैं और अपने काम को टालते रहते हैं। यह कविता उनके अन्य कार्यों जैसे "युगधारा" और "प्यासी पथराई आँखें" के साथ प्रकाशित हुई है।

68 कल परसों के बरसों/ कालिया, ममता - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2011**; **140**पृ. **54645**

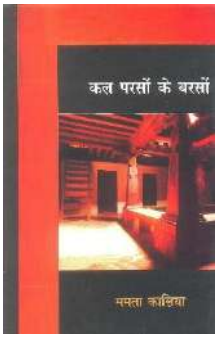

स्मृति - आलेखों के इस संकलन में ममता कालिया एक नयी रचनात्मक भूमिका में सामने आती हैं। विभिन्न नगरों और संस्कृतियों में रहते हुए ममता बहुत से साहित्यकारों, कलाकारों और बुद्धिजीवियों के सम्पर्क में आयीं। लेखिका के संवेदनशील मन पर इनका गहन प्रभाव पड़ा। ये संस्मरण केवल एक मुलाकात वाले रेखाचित्र नहीं वरन् सतत अनुभव सम्पन्नता के आलेख हैं। प्रस्तुत संकलन में एक ओर जैनेन्द्र कुमार, उपेन्द्रनाथ अश्क, चन्द्रकिरण सोनरेक्सा, श्रीलाल शुक्ल, मार्कण्डेय, अमरकांत और कमलेश्वर जैसे दिग्गज रचनाकारों की यादों के ख़ज़ाने हैं तो दूसरी ओर ज्ञानरंजन, काशीनाथ सिंह, गुलजार, रवीन्द्र कालिया और चित्रा मुद्गल जैसे समकालीन साथियों के। ये सभी सम्बन्ध धीरे-धीरे पनपे हैं- शास्त्रीय राग की तरह । साहित्य की सम्पदा जितनी यथार्थ पर टिकी होती है। उतनी ही स्मृति तथा कल्पना पर। संस्मरण विधा का वैभव स्मृतियों की पुनर्रचना में निहित होता है। 'कल परसों के बरसों' में सम्मिलित रचनाकार ममता की कलम से संजीवनी पाकर हँसते बोलते हमारे सामने आ खड़े होते हैं। इन स्मृति आलेखों के सिलसिले लम्बे रहे हैं। रचनाकार ने अपनी स्मृतियों की पोटली खोल कर इन विभूतियों के व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक नयी रोशनी डाली है। जो कुछ भी जीवन और साहित्य के पक्ष में है, ममता कालिया उसके साथ अपनी पूरी रचनाधर्मिता के साथ खड़ी हैं। उनकी मित्र मण्डली व्यापक और रोचक है। लेखिका का विश्वास है कि जब तक स्मृति-संसार है तब तक साहित्य का संस्कार है और रहेगा। इन संस्मरणों को समय-समय पर पाठकों, आलोचकों की भरपूर सराहना प्राप्त हुई है।

69 कविता पथ विमर्श/ सिंह, दिलीप - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2013**; **144**पृ. **54646**

आज भी हैदराबाद में हिन्दी, उर्दू और दक्खिनी में रचनाशीलता की समानांतर त्रिवेणी प्रवाहित है। बोलचाल में सभी दक्खिनी हिंदी का प्रयोग करते हैं-चाहे वे किसी भी भाषा-समुदाय के सदस्य हों। दक्खिनी अत्यंत मुहावरेदार, विटी और आत्मीयता से भरीपूरी भाषा है। इसमें व्याकरणिक जटिलता नहीं है। समाजभाषावैज्ञानिक शब्दावली में कहें तो यह विभिन्न भाषा-समुदायों के दैनंदिन व्यवहार की अवमिश्रित भाषा (पिजिन) है। अपने सृजनात्मक रूप में भी यह अति मानक बनने से परहेज करती रही है। ऐसा करके ही यह साहित्य में भी अपने सहज-सलोने रूप को बचाए रख सकी है-सिर्फ़ उसे थोड़ा-सा संवार कर हैदराबाद की हिन्दी कविताई और उर्दू शायरी में आज भी यह सलोनापन कम नहीं हुआ है। इस शहर में एक लम्बे अर्से तक रहने का सौभाग्य मुझे मिला। यहाँ के अदीबों और अदबी शख्सियतों के नज़दीक आने का और इन्हें 'बिटविन द लाइंस' पढ़ने का भी। तभी इस 'पाठ-विमर्श' की मानसिक तैयारी शुरू हुई। साहित्यिक (ख़ासकर कविता) पाठ में अभिव्यंजना के गठन को देखने का प्रयास इस विमर्श के केन्द्र में है। 'शैली' का प्रश्न प्रत्येक रचनाकार को देखने का उद्दीपक बना है। शैली में भाषाविज्ञान की रुचि पिछले कुछ सालों में बहमुखी बनकर सामने आई है जिसने साहित्य समीक्षा को नई दृष्टि दी है। इस पुस्तक में हैदराबाद के लगभग बीस कवियों-शायरों की काव्य-भाषा का शैली (पाठगत) विश्लेषण किया गया है। रोमन याकोब्सन का यह कथन समीचीन है कि- "साहित्यिक कृतियों का शैलीवैज्ञानिक अध्ययन साहित्य शैलीविज्ञान है, यह एक प्रकार से साहित्य समीक्षा ही है।" इस कथन में यह भी जोड़ दें कि इस समीक्षा प्रणाली में पाठ-विश्लेषण का अधिक महत्त्व है। प्रस्तुत 'कविता पाठ विमर्श' शैली विज्ञान की इसी पाठ-केंद्रित प्रणाली पर आधारित है जिसमें इस प्रणाली का यह लक्ष्य सदा समक्ष रहा है- "एक पाठ की भाषा संरचना तथा प्रसंग, जिसकी अभिव्यक्ति उस पाठ से हुई है, के घटकों के बीच यथोचित रीति से सह-संबंध स्थापित करना।"

70 कहना ना होगा: एक दशक की बातचीत नामवर सिंह के साथ/ ठाकुर, समीक्षा (समीक्षा संपादक.) - वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, **2012**; **272**पृ. **54647**

हिन्दी के मूर्धन्य आलोचक डॉ. नामवर सिंह को पढ़ना यदि साहित्य और जीवन के जटिल रचनात्मक रिश्तों को समझना है, तो उन्हें सुनना इन रिश्तों को परत-दर-परत खुलते हुए देखना। उनकी वाग्मिता का कायल कौन नहीं है, लेकिन संवाद के दौरान तो जैसे उनकी प्रतिभा और विद्वत्ता का अशोक शत-शत फूलों से खिल उठता है। यही कारण है कि पिछले एक दशक में कविता, कहानी, उपन्यास और आलोचना की मौजूदा हालत से लेकर सृजनात्मकता, कला, यथार्थ, परम्परा और समाजवाद के प्रासंगिक तथा आधारभूत प्रश्नों तक अर्थात् देश और दुनिया के लगभग हर साहित्यिक मुद्दे पर किस लेखक से सर्वाधिक संवाद किया गया है, वे हैं नामवर सिंह। इस बीच ये अनेक विवादों के केन्द्र में भी रहे या पूरा सच कहा जाऐ तो उनकी मौलिक और साहसिक स्थापनाओं ने अनेक जरूरी विवादों को उकसाया, जिसके कारण उन्हें कठघरे में खड़ा करने के इच्छुक भी उनसे लगातार जिरह करते रहे हैं। लेकिन नामवर जी ने हर मौके पर बिना विचलित हुए या उत्तेजित हुए अपनी शान्त, संयत और उष्ण शैली में हर प्रश्न का सटीक जवाब दिया है और बातचीत को ऐसे ध्रुवांतों तक ले गये हैं, जहाँ सारे पूर्वग्रह मन्द पड़ जाते हैं और वास्तव का आलोक-विस्फोट-सा होता है। एक साथ कितने विस्तृत सन्दर्भ, कितने अनछुए पहलू और कितने वेधक संकेत । हिन्दी के लगभग दो दर्जन महत्त्वपूर्ण लेखकों और कुछ उत्सुक पत्रकारों से की गयी बातचीत का यह दिलचस्प और विचारोत्तेजक सिलसिला हिन्दी साहित्य के सभी प्रासंगिक पहलुओं को देखने की एक सन्तुलित दृष्टि तो देता ही है, एक निरन्तर विकासशील आलोचक व्यक्तित्व को बहुत करीब से महसूस करने का दुर्लभ अवसर भी।

लेखक अनुक्रमणिका

लेखक	क्रंसं.
अग्निहोत्री, विभा	4
अग्रवाल, पूजा	4
अनामिका	34, 59
आज़मी, कैफ़ी	46
आर्य, साधना	37
कालिया, ममता	31, 61, 68
कुमार, जीतेन्द्र (अनुवादक.)	38
गर्ग, प्रदीप	27
गर्ग, मृदुला	45
गांधी, मल्ली	52
गांधी, महात्मा	5, 41
चट्टोपाध्याय, शरतचंद्र	20
चतुरसेन, आचार्य	53
चंदर, कृष्ण	16
चन्द्रशेखर	49
चुगताई, इस्मत	26
जयशंकर	56
जोशी, संदीप	13
ठाकुर, समीक्षा	70
डालमिया, वसुधा	40

तिवारी, विनोद (संपादक.) 51

दिनकर, रामधारी सिंह 7

नागर, अमृतलाल 36

नागार्जुन 64, 65, 67

नारायण, सूर्य 50

निराला 30

पांडे, अशोक कुमार 57

पुष्पा, मैत्रेयी 25

प्रसाद, जयशंकर 23

प्रियंवदा, उषा 12

प्रेमचंद 33

बागची, अमिताभ 60

भटनागर, राजेंद्र मोहन 2

भंडारी, मन्नू 10, 47, 55

मित्रा, बिमल 21

मिश्रा, अविनाश 22

मिश्रा, रश्मि 4

मुक्तिबोध 44

यशपाल 11, 24

रॉय, सत्यजीत 19, 35, 58

रॉय, अरुंधति 43

वर्मा, अर्चना सिंह महादेवी 42

वाजपेई, अशोक 29

शंकर, गणेश 6

शर्मा, अनघ 15

शास्त्री, विजयपाल 3

शुक्ल, श्रीप्रकाश 18

सत्यार्थी, कैलाश 28

सागर, दयाशंकर शुक्ल 17

सिंह, कारन 32

सिंह, दिनकर रामधारी 8, 9

सिंह, दिलीप 62, 63, 69

सिंह, नामवर 14, 66

सिंह, प्रभात (अनुवादक.) 38

सिंह, विजय प्रकाश (संपादक.) 14

सिंह, वैभव 48

सिंह, सुनील कुमार 39

सौरभ, अभिषेक 54

हजरिका, महेश्वर 1

हबीब, एस इरफ़ान 38

कीवर्ड अनुक्रमणिका

कीवर्ड	क्रंसं.
अंग्रेज़ी चाल	24
अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान	62
अनुवाद प्रक्रिया	62
अनुवाद सिद्धांत	62
अन्तर्विरोध	20
अपराधबोध	45
अल्प विराम	12
अस्मिता बोध	59
अहिंसा	5
आंतरिक द्वन्द्व	45
आत्मकथ्यांश	26
आत्मबोध	56
आत्मसंवादी स्वर	18
आलोचक	48
आलोचक रूपक	66
आहार	6
इतिहास	4
इफको प्रबंधन	54
ईशान्य भारत	1
उत्पत्ति	4

उपन्यास 26, 53
एकांत संवाद 56
ऐतिहासिक उपन्यास 11
ऑस्कर पुरस्कार 19
ओजस्वी 7
कथा-सृजन 55
कल्पनाशीलता 19
काराधान प्रणाली 39
काल-विभाजन 50
काव्य-संसार 29
काशी का अस्सी 14
किशोर साहित्य 19, 35, 58
कृषि संकट 39
केरल, कोचीन 43
कैदी जीवन 5
क्रांतिकारी 57
क्रान्तिवादी कविता 9
गद्य शैली 61
ग्रामीण शिल्प 39
जनजाति कानून 52
जनपक्षधरता 33
जहरीखाल 65

जातीय अस्मिता 32
जीवन अनुभव 21
जीवन विसंगति 67
जीवन्त कथा 31
जेल प्रवास 5
थ्योरी विमर्श 66
दक्खिनी हिंदी 69
दिवास्वप्न 12
नवाचार कथा 15
नारी शोषण 20
नारीवादी शोध 37
निबन्ध संग्रह 48
नीति विफलता 11
नैसर्गिक प्रतिभा 40
पतञ्जलि योग सूत्र 3
पाठक-संवेदना 55
पितृसत्ता 37
पुरुष समाज 20
पुरुष-प्रिया 8
पुरुषार्थ 40
पैनी दृष्टि 31
पौड़ी गढ़वाल 65

प्रकृति-काव्य 65
प्रगतिशील कवि 44
प्रश्नवाचकता 13
प्रांजल भाषा 7
प्रामाणिक ग्रंथ 27
प्रेम 12
प्रेम के कानून 43
प्रेम-काव्य 22
प्रेरक व्यक्तित्व 54
फ़िल्म गीत 46
फिल्मकार 35
फेलूदा किरदार 58
फ्रांस 66
बहुआयामी लैंडस्केप 17
बांग्ला साहित्य 35
बाल दासता 28
बाल विवाह 28
बुद्धि-संघर्ष 8
बौद्धकालीन समाज 53
बौद्धिक विमर्श 27
भक्ति आंदोलन 1
भारतीय किसान 49

भारतीय चित्त 50
भारतीय जनमानस 41
भारतीय प्रभाव 30, 33
भारतीय राष्ट्रवाद 38
भारतीय स्त्री 42
भावनात्मक अनुभव 26
भाषा और समाज 63
भाषा-चरित्र 34
भौतिक संसार 34
मध्यकालीन भारत 2
मध्यवर्गीय विरोधाभास 47
मनुष्य-मन विश्लेषण 60
मनोवैज्ञानिक कहानी 10
मनोवैज्ञानिक पकड़ 47
महामारी (कोरोना संदर्भ) 34
महिला संघर्ष 37
मानव चेतना 2
मानव विविधता 21
मानव सभ्यता 16
मानवशास्त्र 4
मानवीय अनुभूति 47
मानवीय सम्बन्ध 15

मानसिक संसार 10

मार्क्सवाद-गांधीवाद 36

मार्मिक अनुभूति 36

मीमांसा 50

मौलिकता 46

यथार्थवाद 33, 49, 64, 70

यात्रावृत्त 17

युवा कवि 22

युवा चिन्तक 13

यूरोप यात्रा 11

योग 6

योग दर्शन 3

रचनात्मक विकास 55

रचनात्मकता 45

राजनीति 53

राजनीतिक पूर्वाग्रह 23

राजनीतिक प्रतिरोध 29

राजनीतिक व्यंग्य 64, 67

राजनेता 57

राष्ट्र निर्माण 38

राष्ट्रवाद 48

राष्ट्रीय स्वतंत्रता 2

लघु उपन्यास 25

लरिकोर कविता 18

लोककथा शैली 58

लोकतंत्र 51

लोकतांत्रिक मूल्य 49

वात्स्यायन कामसूत्र 22

विराट त्रासदी 24

विस्तृत काल-खंड 60

विस्थापित लोग 24

वैचारिक आंदोलन 27

वैचारिक स्पष्टता 14

व्यक्तित्व अध्ययन 57

व्यावहारिक दुनिया 43

व्यासभाष्य 3

शब्द-शिल्प 29

शारीरिक संबंध 21

शोधपरक अध्ययन 52

श्रम मूल्य 30

श्रम-उत्पीड़न 28

श्रमसाध्य जीवन 9

संघर्षशील शायर 46

सजीव अनुभव 17

सजीव चित्रण 56
संत 1
सत्ता प्रतिरोध 30
सत्तारूढ़ शक्तियाँ 13
सत्य-अहिंसा 41
सनातन नगर 18
संप्रेषणीयता 63
समय यात्रा 16
समाजभाषाविज्ञान 69
समाजवाद 51, 70
संस्कृति पुनर्स्थापन 23
संस्मरण कला 61
संस्मरण संकलन 68
सहकारी संस्था 54
साक्षात्कार संकलन 14
सात्विक भोजन 6
साधारण महिला 25
सामाजिक काम 10
सामाजिक चेतना 8
सामाजिक व्यंग्य 67
सामाजिक व्यवहार 63
सामाजिक संकट 32

सांस्कृतिक पहचान 32
सांस्कृतिक प्रवास 68
साहित्यकार 44
सृजनात्मकता 70
सोलह कविताएँ 7
सौन्दर्यशास्त्र 44
स्त्री अस्मिता 42
स्त्री जीवन 42
स्त्री शक्ति 25
स्त्री संघर्ष 31
स्त्री-दृष्टि 59
स्त्री-पुरुष नियति 60
स्त्री-स्वतंत्रता 40
स्त्रीवाद 59
स्मृति-आलेख 68
स्वतंत्र स्त्री 16
स्वतंत्रता आंदोलन 38, 41, 51
स्वास्थ्य और शिक्षा 52
हरिजन गाथा 64
हिंदी उपन्यास 36
हिन्दी कहानी 15
हिन्दी साहित्य 23, 61

हृदय-मंथन 9

हैदराबाद 69